॥ ओ३म् ॥

# अष्टाङ्ग योग प्रकाश

अर्थात्

## योग से स्वास्थ्य

आचार्य श्री विनयचन्द्र ज्ञान भण्डार,
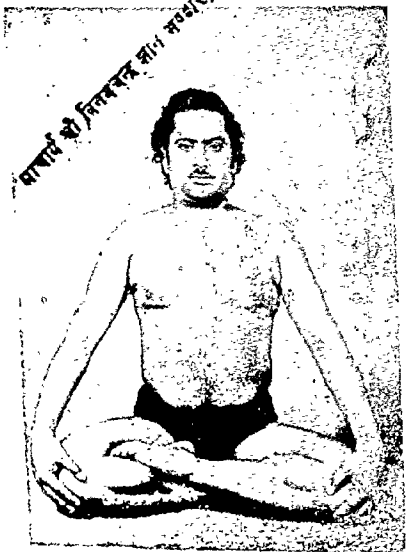
—: लेखक :—

आचार्य भगवानदेव शर्मा

प्रकाशक :- महर्षि दयानन्द योग आश्रम
टंकारा ( गुजरात )

मूल्य १=५०

# प्राकथन :–

आर्यसमाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्द के अनुयाइयों ने सर्व साधारण की "मूर्ति पूजा" से श्रद्धा तो हटा दी; परन्तु महर्षि निर्दिष्ट प्रभु प्राप्ति के सच्चे "अष्टाङ्ग योग" मार्ग पर मनुष्य जाति को ले जाने का प्रयास नहीं किया। उसका कारण हमारी दृष्टि में उनके अनुयाइयों में आध्यात्मिक जीवन की कमी तथा 'योग' के ज्ञान का अभाव है।

यही कारण है कि आज मनुष्य नास्तिक बन, अपने सही लक्ष "मोक्ष प्राप्ति" के पथ पर न चलकर भोगवाद की भट्टी में जलकर, अमूल्य मनुष्य जीवन का नाश करता जा रहा है।

इस दिशा में यह पुस्तक साधारण प्रयास है।

राजरत्न "सेठ श्री नानजीभाई कालिदास मेहता" ने हमारी इस पुस्तक को छपवाने का सारा खर्च देकर हमें जो प्रोत्साहन दिया है, उसके लिए हम उनके हार्दिक आभारी हैं। परमात्मा आपको शतायु करें और आपकी कीर्ति दिन दुनी रात चोगनी बढ़ती रहे एसी हम प्रभु से प्रार्थना करते है।

पाठकों का प्रेम मिला तो आगामी पुस्तक में हम अपने दो सौ चित्रों के साथ योग के आठों अङ्गो की विस्तृत व्याख्या देंगे।

( सर्वाधिकार सुरक्षित )

विनीत,
भगवानदेव शर्मा
१५ जुलाई १९६९

महर्षि दयानन्द योग आश्रम,
टंकारा [गुजरात]

आर्य रत्न

सेठ श्री नानजीभाई कालिदास मेहता

पोरबन्दर [गुजरात]
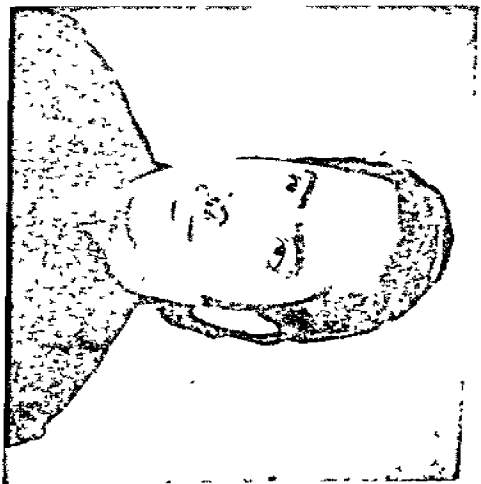
लेखक : आचार्य भगवानदेव शर्मा

॥ ओ३म् ॥

# अष्टाङ्ग योग प्रकाश

ओ३म्मृत्योर्माऽमृतंगमयेति ।

हे सच्चिदानन्द स्वरूप परमात्मन् ! आप अपनी कृपासे हमको मृत्यु मार्ग से निकाल कर अमृत पथ में लाइये ।

(मृत्यु) दुःख से छूटने और ( अमृत ) आनन्द को प्राप्त करने का उपाय (योग) ईश्वरोपासना करना है ।

## योग किसे कहते है ?

"योगश्चित्तवृत्ति निरोधः ॥" अर्थात् :- चित्तवृत्ति का निरोध ही योग है ।

## योग के आठ अंग :

"यम नियमासन प्राणायाम प्रत्याहार धारणा ध्यान समाधयोऽष्टावङ्गानि । योग दर्शन ।"

यम १ नियम २ आसन ३ प्राणायाम ४ प्रत्याहार ५ धारणा ६ ध्यान ७ समाधि ८ यह योग के अष्टाङ्ग हैं।

## यम । १ ।

"तत्राहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्य्यापरिग्रहायमाः । योग दर्शन"

अहिंसा १ सत्य २ अस्तेय ३ ब्रह्मचर्य्य ४ अपरिग्रह ५ यह पञ्च यम हैं ।

### अहिंसा ।

किसी का अनिष्ट चिन्तन न करना । सब प्राणियों के साथ वैर भाव छोड़ कर प्रेम प्रीति से वर्तना । सब कर्म अपने और दूसरों के सुखशान्ति के लिये ही करना ।

जो कोई कष्ट दे तो यह जान कर कि यह हमको हमारे कर्म का फल दे रहा है, बदले में उसको कष्ट देने की कभी चेष्टा भी न करना। जो दुःख प्राप्त हों उनको कर्म फल जान कर सहर्ष सहन करना। परमात्मा को सर्वव्यापक, अन्तर्य्यामी, न्यायकारी और कर्म फल दाता समझ कर निश्चय जानना कि हिंसा का फल दुःख और दया का फल आनन्द है।

" अहिंसा प्रतिष्ठायां तत्सन्निधौ वैरत्यागः। यो. सू."

अहिंसा व्रत का पालन न करने से अहिंसक के समीप वैर का त्याग हो जाता है अर्थात् न वह किसी से वैर करता है और न कोई उससे। वह सब संसार के लिये और सब संसार उसके लिये आनन्द प्रद हो जाता है।

## सत्य।

जैसा अपने ज्ञान में हो वैसा ही सत्य बोलना, करना और जानना। मिथ्याचरण से स्वार्थ की सिद्धि चाहना अनधिकार चेष्टा है, अनधिकार चेष्टा करते ही अन्तःकरण में भय, शोक, मोह, चिन्ता और संशय का का प्रवेश होने लगता है। यही हिंसा आदि पापों और दुःखो का मूल है। सुख का पूर्व रूप निर्भयता और स्वतंत्रता है। निर्भय और स्वतंत्र वही है जो हिंसा रहित सत्य व्रती है। जैसी जैसी मिथ्याचरण मे प्रवृत्ति होती जाती है वैसी ही वैसी आत्मिक निर्बलता अज्ञानता और भय शोकादि की भी वृद्धि होती जाती है। अन्त मे अज्ञानान्धकार में पड़ कर घोर विपत्तियों और क्लेशों के जाल में पड़ जाना पड़ता है। मिथ्याचरण से प्राप्त

की हुई सम्पत्ति भी संकट में डाल कर विनाश को प्राप्त हो जाती है। सत्यव्रती का पूर्वकृत कर्म फल रूप दुःख भाग आत्मिक बल की वृद्धि और आनन्द की प्राप्ति का साधन बन जाता है। सदाचारी बनने और मिथ्याचरण से छूटने का मूलोपाय सत्य भाषण करना है। इससे बाह्य और आभ्यान्तर के दुर्गुण, दुर्व्यसन दूर भाग जाते हैं। सत्य भाषण में वाक् छल न करना और न अप्रयोजन, अप्रिय तथा प्राणियों का अनहित करनेवाला वाक्य बोलना। ईश्वर और संसारके सन्मुख विश्वास पात्र रहना।

" सत्य प्रतिष्ठायाम् क्रिया फला श्रयत्वम्। यो. द."

सत्यव्रती ? अनधिकार चेष्टा नहीं करता और न उसे असमय किसी वस्तु के प्राप्ति की इच्छा ही होती है। उसे अपने सुख शान्ति के उपाय स्वयं सूझ पड़ने लगते हैं। उसे भावि परिणाम का बोध होजाया करता है। उसके सङ्कल्प, विचार, भाव और कर्म सत्य, सम्यक् और नियमित होते हैं; इसलिये उसे सम्यक् सब वस्तु प्राप्त होजाया करती हैं और उसकी सब चेष्टायें, क्रियायें तथा उनके फल आनन्दप्रद होते हैं।

## अस्तेय।

पदार्थ के स्वामी की आज्ञा के विना किसी पदार्थ की इच्छा भी न करना। मातापिता आदि जो अपने पदार्थ प्रसन्नता पूर्वक देवें। जिन पदार्थों के ग्रहण व प्राप्त करने में किसी को दुःख न हो और न अपने मन में भयादि उत्पन्न हो। जिन पदार्थों के भोग करने का अन्तिम परिणाम दुःखभोग न हो किन्तु सुखभोग ही हो। जो पदार्थ देवऋण, पितृऋण और ऋषिऋण आदि ऋणों

से उऋण होकर शेष रह जावें वे अपने और अन्य दूसरों के हैं ।

अस्तेय प्रतिष्ठायां सर्वे रत्नो पस्थानम् । यो. द. ।

जो अपने शुभ सङ्कल्पों की पूर्ति करने की योग्यता प्राप्त कर लेता है । जो धर्मयुक्त पुरुषार्थ से ही पदार्थों की प्राप्ति करना अपना कर्तव्य समझता है, जो आय से अधिक व्यय नहीं करता है । जो लोभ और मोह रहित आवश्यकतानुसार और नियमपूर्वक पदार्थों का संग्रह और भोग करता है । जो सब कर्म परोपकार युक्त करता है, उसके लिये संसार में कोई पदार्थ दुर्लभ नहीं है । उसको जिस समय जहाँ जिस पदार्थ की प्राप्त करने की आवश्यकता होती है, उसी समय ही वह पदार्थ प्राप्त हो जाता है ।

## ब्रह्मचर्य ।

मैथुन का त्याग करना । किसी प्रकार की चञ्चलता और कुचेष्टा न करना । किसी का स्पर्श न करना । नीचे दृष्टि रखना । एकान्त वास में निवास करना । प्रायः मौन रहना । समय को व्यर्थ न खोना किन्तु नियत समय पर नियमपूर्वक सब काम करना । शुद्ध सतोगुणी स्वल्पाहार सेवन करना । दिन में, रात्रि के प्रथम पहर और प्रातःकाल ब्राह्म मुहूर्त में न सोना । सीमा से अधिक न जागना । कौपीन वन्त होना अर्थात् वीर्य्य रक्षा करने में सदैव सावधान रहना ।

" ब्रह्मचर्य्ये प्रतिष्टायां वीर्य्य लाभः । यो. द. । "

ब्रह्मचर्य्य व्रत का पालन करने से वीर्य्य लाभ होता है । जितनी अधिक वीर्य्य रक्षा की जाती है उतनी ही

अधिक ज्ञान, कर्म, उपासना और विज्ञान की प्राप्ति तथा इच्छा की पूर्ति करने की शक्ति प्राप्त होता है।

## अपरिग्रह।

स्वार्थ, अभिमान, दम्भ और पाखंड न करना। पराधीन कर्मों और त्याज्य वस्तुओं को स्वयं त्याग देना। आवश्यकताओं को न्यून करना। आवश्यकता से अधिक वस्तु समीप न रखना। पुत्र, धन और मान प्रतिष्ठा की इच्छा न करना। दूसरों का हित करते हुए जीवन निर्वाह करना। एकान्त शान्त रहना।

एकान्त शान्त रहने पर भी कुछ काल तक भूत काल की जीवन घटनाओं और प्रसङ्गों का स्मरण जागृत और स्वप्नावस्था में आता रहता है। उस समय उनके कारणों और परिणामों का विचार करके शिक्षा प्राप्त करना। यदि सङ्ग दोष या संस्कार दोष से मन की मलिन वासनाओं व पापों की ओर प्रवृत्ति हो तो उनसे विरुद्ध उच्च और उग्र विचार और भाव धारण करके मन को उत्साहित और उत्तेजित रखना। जिनके सङ्कल्प, विचार, भाव और कर्म हिंसादि पापों से रहित सत्य धर्मानुकूल होते हैं उनके स्वप्न भी वैसे ही होते हैं।

"अपरिग्रह स्थैर्ये जन्म कथन्ता सम्बोधः। यो. द.।"

अपरिग्रह व्रत का पालन करने से शारीरिक और मानसिक बल तथा स्मरण शक्ति की वृद्धि होती है तब योगी देश, काल और वस्तु के संयोग से अपनी पूर्व जन्म और इस जन्म की स्थिति, स्वकर्तव्य और भावी परिणाम को जान लेता है।

## नियम । २ ।

"शौचसन्तोष तपःस्वाध्यायेश्वर प्रणिधानानि नियमाः । यो. द. ।"

शौच १ सन्तोष २ तप ३ स्वाध्याय ४ ईश्वर प्रणिधान ५ यह पञ्च नियम है ।

### शौच ।

शरीर, स्थान, वस्त्र और पात्रादि को स्वच्छ और पवित्र रखना । शीतल, मंद, सुगन्ध युक्त वायु का सेवन करना । हल्का, मीठा, निर्मल जल छान कर पीना । सुगन्धित पुष्टिकारक रोगनाशक और मिष्ट ( सतोगुणी ) भोजन करना ।

प्रातःकाल ब्राह्म मुहूर्त मे जागकर दूर वन में जा मलमूत्र का त्याग कर मिट्टी और जल से अच्छे प्रकार स्वच्छ और शुद्ध हो, दंतधावन, कुल्ला और स्नानादि से निवृत्त हो नित्य कर्म करना । ऐसे ही सायंकाल भी । निवासस्थान में वायु और प्रकाश का प्रवेश हो । नित्य सायं प्रातःकाल अग्निहोत्र होता हो । शीतोष्ण का शक्ति से अधिक सेवन न करना ।

क्षुधा तृषा से अधिक, वारंवार, अनियमित और असमय खानपान न करना । भोजन के पदार्थ देश, काल अवस्था और शरीर के अनुकूल हों । भोजन करने में शीघ्रता न करना किन्तु अच्छे प्रकार दांतों से पीस लेना । किसी का जूठा व किसी के साथ एक थाली व पात्र में भोजन व जलपान न करना । भोजन के पूर्व हाथ-पग धोकर आचमन और पश्चात् कुछ किञ्चित् जलपान कर अच्छे प्रकार कुल्ला आदि करके स्वच्छ होना ।

मद्य, मांस, तमाकू आदि अभक्ष्य, सड़े, गले, बुसे और रूक्ष तथा लहसन, प्याज, सलजम, गाजर, गोभी, आलू, लालमिर्च और खटाई आदि दुर्गंधित और तमोगुणी आहार न करना। शनैः शनैः छोड़ने का अभ्यास करके नमक आदि रजोगुणी आहार भी छोड़ देना। जिस खेत में गवादि पशुओं के मलमूत्र के अतिरिक्त घृणित खाद पास पड़ता हो उस खेत के अन्नादि का सेवन न करना। जो अन्नादि वन में ही रहे ग्राम में न लाया जावे तथा वन में ही संस्कार कर के विधिवत् बनाया गया हो उसका सेवन करना अत्युत्तम है। जल यदि उत्तम प्राप्त न हो तो अच्छे प्रकार अग्नि से उष्ण कर लेना व अन्य प्रकार से शुद्ध निर्मल बना लेना। जल मिट्टी और ताम्रपात्र में रखना उत्तम है। ताम्रपात्र में ओष्ठ लगाकर न पीना और न उसमें जल के अतिरिक्त अन्य कोई खानेपीने योग्य वस्तु रखना। कोयला व दुर्गंधित लकड़ी आदि से भोजन न बनाना।

सोने के समय वायु को आने जाने देना। मुख को न ढक कर अंधेरे में सोना। मुख से श्वाँस न लेकर नासिका से ही लेने का अभ्यास रखना। मलमूत्र, छींक आदि को न रोकना। केश, नख कटाते रहना, यदि केश न भी कटाना तो स्वच्छ अवश्य रखना। मनुष्यादि की नासिका आदि से निकली वायु और उनकी शरीरादि की दुर्गंध से बचना। किसी को विशेष आवश्यकता के बिना समीप न आने देना। विशेष करके जो अभक्ष्य पदार्थ खाते-पीते हों और जिनको तमोगुणी पदार्थ अधिक प्रिय हों। जो शरीर; स्थान, वस्त्र, पात्रादि को

अपवित्र और घृणित रखते हों, जो दूषित, रोगी और दुष्ट स्वभाव के हों उनको अपने वस्त्र पात्रादि का भी स्पर्श न करने देना और न उनके बनाये भोजन, वस्त्र पात्रादि का ही ग्रहण करना, जहाँ तक हो सके अपने आवश्यक कार्यों को स्वयं कर लेना।

" शौचात्स्वांग जुगुप्सा परैर संसर्गः। यो. द.। "

" *किञ्च सत्व शुद्धिसौ मनस्यै काग्रेन्द्रिय जयात्म दर्शन योग्य त्वानिच। यो. द.।* "

शौच नियम का पालन करने से बुद्धि की स्थूलता मन की मलीनता, चित्त की चञ्चलता दूर होती है। इन्द्रियाँ अनुकूल होती हैं। आलस्य और प्रमाद दूर होता है। *शरीर और संसार से त्याग भाव उत्पन्न होता* है। तमोगुणी और रजोगुणी पदार्थ वैसे प्रतीत होते हैं, जैसे छोटे बालक को कटु पदार्थ। ईश्वर मे प्रेम बढ़ता है और उपासना करने मे तीव्र गति से प्रवृत्ति होती है।

## सन्तोष।

अपने आप में स्थित अर्थात् सन्तुष्ट रहना। आत्म प्रिय कर्म करना। आनन्दित पुरुषों से मैत्री, दुःखियों पर करुणा, धर्मात्माओं पर प्रसन्नता और अधर्मियों से उपेक्षा रखना। राग और द्वेष से पृथक् रहना। हानि में शोकित *और लाभ में हर्षित न होना। अनायास जो* प्राप्त हो उसे अपना भोग समझ कर सन्तुष्ट रहना। मौन अथवा मितभाषी होना। सब प्राणियों और अप्राणियों में अन्तर्यामी परमात्मा की गति अर्थात् प्राप्ति का अनुभव करके प्रसन्न रहना।

" सन्तोषा दनुत्तम सुख लाभः । यो. द. । "

सन्तोष नियम का पालन करने से उत्तम सुख लाभ होता है।

## तप ।

अपने उद्देश्य को पूर्ण किये विना न छोड़ना । योग्यता और अधिकार को बढ़ाना । धैर्य्य और विवेकपूर्वक स्वकर्तव्य का पालन करना । संसार का उपकार निष्काम भाव से करना । अनेक जन्मों की मलिन वासनाओं को अन्तःकरण से दूर करना । कष्टों और विघ्नों का सहन और निवारण करना । अपने से जो भूल, अपराध और पाप हो जावें उनका सुधार और प्रायश्चित करना तथा अपने को स्वयं उचित दंड देना ।

" कायेन्द्रिय सिद्धिर शुद्धि क्षयात्तपसः । यो. द. । "

तप करने से शरीर और मनादि इन्द्रिय के विकार दूर होकर सिद्धि प्राप्त होती है ।

## स्वाध्याय ।

"ओ३म्" का अर्थ मननपूर्वक जप करना, वेद और उपनिषदादि तथा अन्य भी ऋषिप्रणीत ग्रन्थों का स्वाध्याय पक्षपात, हठ, स्वार्थ और दुराग्रह को छोड़कर शुद्ध बुद्धि से तर्क के साथ प्रत्यक्षादि प्रमाणों से विचार करते हुए करना । उत्तरोत्तर काल, वेद, वेदाङ्ग के पठन, पाठन की उन्नति करते रहना ।

जिस प्रकार यदि मनुष्य भोजन न करे तो शरीर निर्बल हो जाता है और वह कोई काम नहीं कर सकता है इसी प्रकार नित्यप्रति स्वाध्याय करके यदि ज्ञानामृत पान न किया जाय तो ज्ञान, विचार, विवेक, उत्साह

और पुरुषार्थ शक्ति निर्बल पड़ जाती है। चित्त को एकाग्र करने और इष्टदेव की ओर लगाने का साधन स्वाध्याय है। योगमार्ग मे चलने के लिये स्वाध्याय ज्ञान प्रकाश का साधन है।

"स्वाध्यायादिष्टदेवतासम्प्रयोगः। यो. द.।"

स्वाध्याय करने से उत्साह और पुरुषार्थ की वृद्धि। धारणा, ध्यान और समाधि की सिद्धि। ज्ञान, कर्म उपासना, विज्ञान और इष्टदेव परमात्माकी प्राप्ति होती है।

योगी मूर्द्ध ज्योति में संयम कर के ग्रन्थ के जिस विषय का स्वाध्याय करना है उस विषय के लिखने के समय ग्रन्थ कर्ता का जैसा ज्ञान, विचार और भाव था वैसा ही जान लेता है और ग्रन्थ कर्ता की आत्मा का दर्शन करता है। मानो ग्रन्थ कर्ता योगी को स्वयं पढ़ाता है। वेदों के स्वाध्याय से ईश्वर का भी साक्षात्-कार होता है।

## ईश्वर प्रणिधान।

इस शरीर में पञ्च तत्त्व हैं। वे सब अपने अपने सजातीय तत्त्वों की ओर जा रहे हैं। अन्त मे वे हमारा साथ छोड़ देंगे, क्यों कि हम (जीव) उनमे के नहीं हैं; किन्तु कुछ ईश्वर से मिलते जुलते हैं। ईश्वर और हम दोनों "निराकार" और "चेतन" हैं। ईश्वर "अमृत" है और हम "अमृत पुत्र" हैं। ईश्वर और हममे देशकालकी दूरी नहीं है, केवल ज्ञान की दूरी है, जो उपासना (योग) करने से दूर हो सकती है।

सर्वदा और सर्वावस्था मे ईश्वर के समीप रहना अर्थात् परम पिता, परम गुरु, परम सहायक परमात्मा

को सच्चिदानन्द स्वरूप, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान्, सर्वव्यापक, सर्वाधार, सर्वेश्वर, करुणाकर, प्रणयनिधि, अधमोद्धारक, सकल दुःख विनाशक सर्वानन्द और अन्तर्यामी जान कर स्तुति, प्रार्थना, उपासना और आज्ञापालन करने में सदैव निमग्न रहना। प्राण, मन, श्रोत्र, नेत्र और वाणी आदि को ईश्वर के अनुकूल रखना। जीवनार्पण कर देना अर्थात् जीवन का एक श्वांस भी ईश्वर के प्रतिकूल न हो। ईश्वरीय आनन्द और प्रेरणा का सदैव अनुभव करते रहना इसमें असावधानी न हो। प्रेम के आदर्श नचिकेता, ध्रुव और प्रह्लादका ऐसा प्रेमभाव धारण करना।

"समाधि सिद्धिरीश्वर प्रणिधानात्। यो. द.।"

जो एक क्षण के लिये भी कभी ईश्वर को नहीं भूलता, जिस के जीवन का लक्ष्य ईश्वर प्राप्ति है। जिसकी गति, मति और रति ईश्वर में ही है, उसी को समाधि सिद्धि होती है।

## आसन। ३।

"तत्र स्थिर सुख मासनम्। यो. द.।"

जिसमें सुखपूर्वक शरीर और आत्मा स्थिर हो उसको आसन कहते हैं। जिस वन में स्वभाव से ही काले मृग विचरते हों। जहाँ उत्तम जलाशय हो, यदि झरना झरता हो तो अत्युत्तम जहाँ शुद्ध वायु आती हो। जहाँ सुगन्धित पुष्पादि हों। जहाँ अग्नि होत्रादि "यज्ञ" होता हो। जहाँ विघ्नकारी मनुष्यादि न हों। जो नेत्रों को पीड़ा देनेवाला न हो। जहाँ कंकड़ बालू और धूप न हों। जो निर्विघ्न और एकान्त हों। जो समशुद्ध और

प्रिय हों। वहां कुशादि बिछा, बैठकर प्राणायाम और प्रत्याहार का संयम करे।

जिस विधि से सुखपूर्वक बैठकर प्राणायामादि क्रिया की जा सके, कोई नस दबने न पावे और चित्त में अनस्थिरता न हो उसी स्थिरता से बैठना चाहिये। बैठने की सर्वोत्तम विधि यह है कि दाहिने पग की एड़ी वाम ओर की कटिमें लग जावें और पंजा कटि से बाहर रहे। वाम पग का पंजा दाहिने पग की गांठ के नीचे हों और अंगुलियां बाहर निकली हों। दोनो हाथों की हथेली ऊपर को और उनका पृष्ठभाग अपनी ओर की गांठों पर हों। दाहिने हाथ की तर्जनी के ऊपर का भाग अपने अंगूठे के मध्यभाग मे मिला हो। वाम हाथ की तर्जनी का ऊपर का भाग अपने अंगूठे के ऊपर के भाग मे मिला हो। शेष दोनों हाथों की अंगुलियां परस्पर मिली, सीधी और किञ्चित् नीचे की ओर झुकी हों। सब अङ्ग कड़े और सीधे हों। आंखें बन्द हों।

"ततो द्वंद्वा नभि धाता।"

"प्रयत्न शैथिल्या नन्त समापत्तिभ्याम्। यो. द.।"

इस प्रकार बैठकर प्राणायाम और प्रत्याहार करने से शरीर के सब अङ्ग, प्रत्यङ्ग और नस-नाड़ियां स्थिर रहती हैं। आलस्य नहीं आता और विघ्न शान्त रहते हैं। जब योगी का मन उपासन मे पूर्णरूप से लग जाता है तब आसन की सिद्धि स्वतः हो जाती है।

## * शीर्षासन *

फलों का राजा आम को 'माना' जाता है। ठीक इसी प्रकार आसनों का राजा "शीर्षासन" को माना गया है।

इस आसन को बहुत से लोग वृक्षासन, कपाली आसन, शीर्षासन तथा विपरीतकरणी मुद्रा भी कहते हैं।

विधि :- शीर्षासन करने से पूर्व पेट पूर्ण रूप से साफ होना आवश्यक है। एक नरम कपड़े की ईंडरी जमीन पर रखें। घुटने टेक कर जमीन पर बैठ जावें,
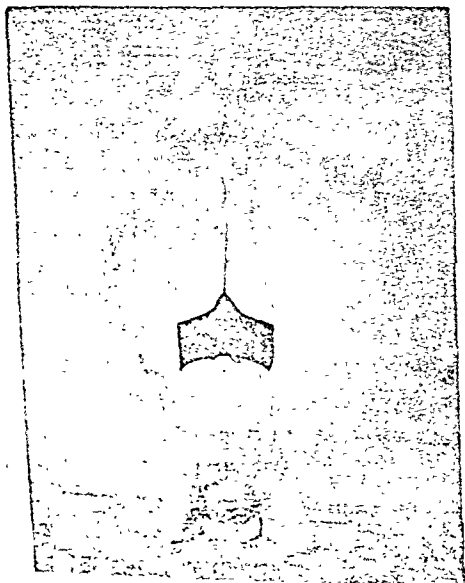
शीर्षासन-१

हाथों की अंगुलियों को एक दूसरे में डालकर, नरम कपड़े की ईंडरी के सहारे गोल रखें। उसके ऊपर सिर को इस तरह रखें, जिससे सिर के आगे की तरफ (जहाँ से बाल शुरू होते हों) वहाँ से चार अंगुल तक का भाग ईंडरी पर हो और सिर के वास्तविक स्थान पर दबाव न पड़े। इसका पूरा ख्याल रखा जाए। अब घुटनों को ऊपर उठा लें। टांगे सीधी करें। पैर के अंगूठे जमीन पर ही रहें। शरीर सीधा रखें। पांवों को मुँह की ओर लावें। शरीर का वजन हाथों पर तथा सिर के आगे के भाग पर रहना चाहिए। फिर शरीर को सम्भालते हुए धीरे धीरे टांगों को मोड़ कर, घुटनों का आकाश की तरफ ले जावें। इस प्रकार करने से पाँव पीछे की तरफ को चले जाएँगे। इसके पश्चात् पाँवों को धीरे धीरे ऊपर आकाश की तरफ ले जावें। शरीर बिलकुल सीधा रखने का पूरा ख्याल रखा जाय। प्रथम १०–१५ सेकण्ड तक ही यह आसन किया जाय। क्रमशः समय बढ़ाया जावे। दृष्टि बन्द न रखी जाए। कुछ समय दृष्टि सामने हो और कुछ समय सिर से एक फुट की दूरी पर हो।

इस आसन को करने में प्रथम कठिनाई हो तो दीवार के सहारे करने का अभ्यास किया जाय।

शीर्षासन करते समय प्राणायाम की क्रिया पर खास ध्यान दिया जाना चाहिए। अन्यथा पूर्णलाभ न हो सकेगा।

जिस प्रकार की क्रिया कर के पाँवों को ऊपर ले जाया गया, ठीक उसी प्रकार नीचे उतार कर, सिर को जमीन से उठाकर कुछ क्षण सीधे खड़े रहें। उसके

पश्चात् शरीर को हलका छोड़कर शवासन की स्थिति में सीधा उल्टा तथा दोनों करवटों के आधार पर जमीन पर सो जावें। अच्छी तरह अभ्यास हो जाने पर शीर्षासन करते हुए अन्य क्रियाएँ भी करें जैसा कि चित्रों में दिखाया गया है।

लाभ—"हठयोग प्रदीपिका" में शीर्षासन के लाभों का उल्लेख करते हुए लिखा है :—

नित्यमभ्यासयुक्तस्य, जठराग्निविवर्धिनी।
आहारो बहुलस्तस्य संपाद्यः साधकस्य॥

एकपाद शीर्षासन-२

हाथो की अंगुलियों को एक दूसरे मे डालकर, नरम कपड़े की ईडुरी के सहारे गोल रखें। उसके ऊपर सिर को इस तरह रखें, जिससे सिर के आगे की तरफ (जहाँ से बाल शुरू होते हों) वहाँ से चार अंगुल तक का भाग ईडुरी पर हो और सिर के वास्तविक स्थान पर दबाव न पड़े। इसका पूरा ख्याल रखा जाए। अब घुटनों को ऊपर उठा लें। टांगे सीधी करें। पैर के अंगूठे जमीन पर ही रहें। शरीर सीधा रखें। पाँवों को मुँह की ओर लावें। शरीर का वजन हाथों पर तथा सिर के आगे के भाग पर रहना चाहिए। फिर शरीर को सम्भालते हुए धीरे धीरे टांगों को मोड़ कर, घुटनों का आकाश की तरफ ले जावें। इस प्रकार करने से पाँव पीछे की तरफ को चले जावेंगे। इसके पश्चात् पाँवों को धीरे धीरे ऊपर आकाश की तरफ ले जावें। शरीर बिलकुल सीधा रखने का पूरा ख्याल रखा जाय। प्रथम १०-१५ सेकण्ड तक ही यह आसन किया जाय। क्रमश: समय बढ़ाया जावे। दृष्टि बन्द न रखी जाए। कुछ समय दृष्टि सामने हो और कुछ समय सिर से एक फुट की दूरी पर हो।

इस आसन को करने में प्रथम कठिनाई हो तो दीवार के सहारे करने का अभ्यास किया जाय।

शीर्षासन करते समय प्राणायाम की क्रिया पर खास ध्यान दिया जाना चाहिए। अन्यथा पूर्णलाभ न हो सकेगा।

जिस प्रकार की क्रिया कर के पाँवों को ऊपर ले जाया गया, ठीक उसी प्रकार नीचे उतार कर, सिर को जमीन से उठाकर कुछ क्षण सीधे खड़े रहे। उस के

पश्चात् शरीर को हलका छोड़कर शवासन की स्थिति में सीधा उल्टा तथा दोनों करवटों के आधार पर जमीन पर सो जावें। अच्छी तरह अभ्यास हो जाने पर शीर्षासन करते हुए अन्य क्रियाएँ भी करें जैसा कि चित्रों में दिखाया गया है।

लाभ—"हठयोग प्रदीपिका" में शीर्षासन के लाभों का उल्लेख करते हुए लिखा है :—

नित्यमभ्यासयुक्तस्य, जठराग्निविवर्धिनी।
आहारो बहुलस्तस्य संपाद्यः साधकस्य॥

एकपाद शीर्षासन-२

अर्थात् :- जो साधक नित्य इस शीर्ष आसन का अभ्यास करता है। उसकी जठराग्नि बढ़ती है। इसे अच्छी तरह से पेट भर कर भोजन करना चाहिए, पूरा भोजन करना चाहिए।

काल पर विजय प्राप्त करने सम्बन्धी लिखा है :-

वलितं पलितं चैव षण्मासोर्ध्वं न दृश्यते।
यामात्र तु यो नित्यमभ्यसेत्स तु कालजित्॥

अर्थात् :- छः मास तक इस आसन का अभ्यास करने से वलिया और पालियाँ दूर होता है। तीन घण्टे रोज अभ्यास करने से काल पर विजय प्राप्त होती है।

कुरुतेऽमृतपानं यः सिद्धानां समतामिदम्।
स सेव्यः सर्व लोकानां बन्धमेनं करोति य.॥

अर्थात् :- जो व्यक्ति शरीरस्थ चन्द्रामृत का पान इस आसन के अभ्यास द्वारा करता है, वह सिद्ध समान होता है। जो सर्व लोकों में पूजा जाता है।

नेत्र—नेत्रों की ज्योति की रक्षा सम्बन्धी कविने लिखा है.— 'पुनर्दारः पुनर्वित्तं न च नेत्रं पुनः पुनः'।

परंतु भारतवासी इस ओर बहुत ही लापरवाही रखते हैं जिसका यह परिणाम निकला है कि आजकल दुनिया में चश्मे लगाने वालों की संख्या दिन प्रति दिन बढ़ती जा रही है।

वेद ने हमें उपदेश दिया है कि :—

'पश्येम शरदः शतम्'।

हम सौ वर्ष तक देखें। यह तभी होना सम्भव होगा, जब हम अपने नेत्रों की सावधानी पूर्ण ढंग से रक्षा करेंगे। बिना आँखों की ज्योति के इन्सानों के लिये संसार के समस्त धन बेकार हैं। उनके लिये

संसार सूना और अंधकारमय वन जाता है । शीर्पासन से आँखों का हर प्रकार से व्यायाम होता है । यदि विधिपूर्वक आँखों की पुतली घुमाई जाय तो अधिक लाभ होगा, यह विधि किसी जानकर से सीखनी चाहिए। शोर्पासन नित्य करने वाले को आयु पर्यन्त चश्मा लगाना नहीं पड़ता । आँखें तेज़ वनती हैं ।

वीर्य रक्षा :— शीर्पासन करने से खून का प्रवाह शुक्राशय की ओर न जा कर मस्तिष्क की ओर जाता है, जिससे मनुष्य ऊर्ध्वरेता वनता है । वीर्य की ऊर्ध्व

कोन शीर्पासन-२
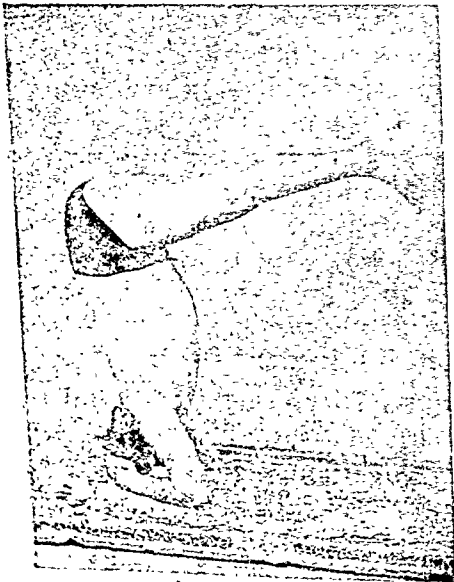
गति होने से स्वप्नदोष, धातु, वायु, प्रमेह आदि रोगों का नाश हो जाता है और वीर्य परिपक्व हो कर शरीर मे ओज पैदा करता है। शरीर तेजस्वी बनता है। शीघ्र बुढापा नहीं आता। आयु बढ़ती है। पाचन शक्ति बढती है। सिर के तमाम रोग जैसे कि सिर मे चक्कर आना, सिर का हलका हो जाना, कमजोर होना, पागलपन, मूर्छा आना आदि से मनुष्य बचता है।

निद्रा :— शीर्षासन नित्य करने वाले को निद्रा खूब आती है। उसे स्वप्न भी नहीं आते। स्मरण शक्ति बढ़ती है। पेट हलका रहता है। 'विसेरोपटोसिस' (Viseerotosis) तथा 'हरनियां (Herania) जैसे रोग नहीं होते। 'हिस्टीरिया' न्युरेस्थेनिया जैसे रोग मिट जाते है।

शीर्षासन करने से खून के तथा चमड़ी के रोग नहीं होते। हृदय पुष्ट होता है। प्राणों की स्थिरता रहती है। मनुष्य शरीर के सब तंत्रों और खास कर के नाड़ीतंत्र (Nervoussystem) जो मानसिक और शारीरिक परिस्थिति को नियंत्रित करता है और उसे स्वस्थ रखता है। मानसिक तथा शारीरिक रीलेसेसन (Relaxation) के लिये शीर्षासन बहुत ही अच्छा है।

गर्भावस्था मे स्त्रियों को तथा (Congested Throat) जैसे रोगियों को यह आसन नहीं करना चाहिए।

आयु तथा शरीर की स्थिति को ध्यान मे रखकर, इस आसन के समय में फेरफार किया जाना चाहिए।

नव जीवन देने वाले, शरीर में कायाकल्प करने वाले 'शीर्षासन' को नित्य करने वाले को अपार

आनन्द प्राप्त होता है। मोक्ष प्राप्ति के चाहक, मृत्यु पर विजय पाने के इच्छुक इस आसन का निरन्तर अभ्यास बढ़ाते रहते हैं।

सुख, शान्ति और समृद्धि के चाहकों को शीर्षासन अवश्य करना चाहिए।

❊

## ❊ ऊर्ध्वपद्मासन ❊

शीर्षासन कर के, सावधानीपूर्वक धीरे धीरे दोनों टाँगें मोड़कर पद्मासन लगाने से ऊर्ध्वपद्मासन होता है।

ऊर्ध्वपद्मासन

शीर्षासन सिद्ध हो जाने पर ही इस आसन को शुरू करें। नहीं तो गिर जाने की सम्भावना रहती है। गिरने से हानि होती है। कमज़ोर शरीरवाला व्यक्ति यह आसन न करे। नुकसान होने का भय रहता है।

लाभ :– ऊर्ध्वपद्मासन की अवस्था में की गई प्रभु प्रार्थना का फल शीघ्र मिलता है। प्राचीन युग में तपस्वी लोग उल्टे होकर 'शीर्षासन' अथवा 'ऊर्ध्वपद्मासन' अथवा ऐसे प्रकार के किसी आसन से अपने इष्टदेव की आराधना कर के सिद्धि प्राप्त करते थे। इस विषय में हमें महाभारत तथा अनेक पुराणों में इसके उदाहरण मिलते हैं। शीर्षासन के जो लाभ हैं, वे सब इस आसन के करने से मिलते हैं। इस आसन से शरीर पर संपूर्ण प्रभुत्व प्राप्त होता है। बाल गिरने बन्द होते हैं। आँखों की ज्योति बढ़ती है। स्मरण शक्ति बढ़ती है। स्वप्नदोष की बीमारी दूर हो जाती है। उम्र बढ़ती है। शरीर सुन्दर और सुडौल बनकर तेजस्वी बन जाता है।

स्त्रियाँ इस आसन को न करें।

## * पद्मशिरनाभिस्पर्शासन *

शीर्षासन की अवस्था में पद्मासन कर के नाभि को स्पर्श करने के कारण इस आसन को "पद्मशिरनाभि-स्पर्शासन" कहते हैं।

विधि :– सिर के नीचे कोई नरम कपड़ा आदि रखकर, शीर्षासन कर के, उसी अवस्था में 'पद्मासन' लगावें, फिर धीरे धीरे मुड़ी हुई (पद्मासन की अवस्थामें) टाँगों को तथा पैरों को पेट से लगाकर नाभि का स्पर्श

करें। यह आसन 'शीर्षासन' सिद्ध हो जाने के पश्चात् 'पद्मासन' सिद्ध होने पर बड़ी सावधानी से करें। यह आसन करते समय 'पूरक' करें। 'पद्मासन' लगाने से पूर्व 'रेचक' कर के उसके पश्चात् नाभि को स्पर्श करें।

लाभ :- इस आसन से, शरीर की कमज़ोरी दूर होती है। शरीर तेजस्वी बनता है। खुन की खराबी तथा चमड़ी के रोग दूर होते हैं। स्मरण शक्ति बढ़ती

पद्मशिरनाभिस्पर्शासन

है। मुँह सुन्दर बनता है। आँखों की ज्योति बढ़ती है। पेट की बीमारियाँ समाप्त हो जाती हैं। जठराग्नि प्रदीप्त बनती है। हृदय मज़बूत बनता है। ज़ुकाम में इस आसन को करने से जल्दी लाभ पहुँचता है। हर्नियाँ (Herania) रोग मिट जाता है। विसेरोप्टोसीस ( Visceraptosis ) जैसा रोग मिट जाता है। जिससे बढ़ा हुआ पेट ठीक हो जाता है। स्वप्नदोष तथा प्रमेह की बीमारी दूर हो जाती है।

स्त्रियों को यह आसन नहीं करना चाहिए।

## ※ सूर्यनमस्कार ※

सम्पूर्ण सूर्यनमस्कार करने की दस क्रियाएँ-अवस्थाएँ हैं। जिनका संक्षेप में हम नीचे वर्णन करते हैं:-

(१) प्रथम क्रिया को अवस्थान कहते हैं। इसमें सीधे खड़े रहें। कमर तनी हुई हो। हाथ छाती से सटे हुए, एक दूसरे से दबे हुए हों। हाथ के अंगूठे छाती के मध्य भाग में जो गढ्ढा है, उस में टिकावें। बाकी की चार अंगुलियाँ मिलाकर, अंगूठों से दूर फैलाकर रखें। छाती निकाले और पेट को अन्दर ले जाने की कोशिश करें। फेफड़े फुलावे। दृष्टि नासाग्र भाग पर रखे। 'समं कायशिरोग्रीवम्' रहें। अर्थात् शरीर, गर्दन और मस्तक एक रेखा में तना हुआ रखें। (चित्र में देखे) बुलन्द आवाज में 'ओरेम्' का उच्चारण करें। धीरे धीरे आवाज़ को मंद करे। इस प्रकार तीन बार करें। फिर 'पूरक' अर्थात् मुँह बन्द कर के नाक से ध्वनियुक्त पूर्ण श्वास भीतर लें और फिर 'कुंभक' ( अर्थात् 'पूरक' से भीतर ली हुई वायु को रोक रखे ) करे।

(२) दूसरी अवस्था जिस को 'जानुनस' कहते हैं: इस में पहली अवस्था में किये गये 'कुम्भक' को कायम रखकर, टांगे सीधी रखते हुए नीचे झुकें। दोनों हाथों को जमीन पर रखे। फिर नाक को दोनों टांगों के मध्य भाग में लगावें। और ध्वनियुक्त 'रेचक' (अर्थात् 'कुंमक' में रोकी हुई वायु को नाक द्वारा बाहर निकालना) करे। पेट को अन्दर खींचने से यह आसन सरलता से होगा। इस आसन को करते हुए मन में यह भाव

सूर्यनमस्कार

लावे कि 'मुझे तेजस्वी, शक्तिशाली, निरोगी बनना है।'

(३) तीसरी अवस्था को 'ऊर्ध्वेक्षण' कहते हैं। इस में 'पूरक' (अर्थात् ध्वनियुक्त सांस अन्दर लेना) कर के, भुजाएँ सीधी रखते हुए एक पैर पीछे ले जावे। और उस पैर का घुटना और उसकी अंगुलियां जमीन पर रखे। दूसरे पैर का घुटना कांख के नीचे से भुजा के सामने लावें। सिर को पीछे की ओर ले जावे। दृष्टि आकाश की ओर रखे। पीठ और कमर झुकावें। 'कुम्भक' करे। क्रमशः दोनों पैर बदल कर आगे पीछे ले जावे।

(४) चौथी अवस्था को 'तुलितवपु' कहते हैं। 'कुम्भक' कायम रखते हुए, दोनों पैर पीछे रखें। पैर के दोनों अंगूठे, घोटे और दोनों घुटने सटे हुए रखें। भुजाएं सीधी रखें। एड़ी, पीठ, सिर सब एक रेषे में रखे। दोनों हथेलियाँ और दोनों पैरों की अंगुलियों पर सारे शरीर का वज़न रखे। 'कुम्भक' कायम रखें।

(५) पाँचवीं अवस्था को 'साष्टांग' कहते है। इसमें 'कुम्भक' को न छोड़ते हुए, घुटने जमीन से लगावें। हाथ के तलवे तथा पैर अपने स्थान पर रहें, इस का पूरा ख्याल रखे। ठुड्डी गले के नीचे के भाग से लगावे। नासिकाग्र भाग को जमीन से स्पर्श करावे। भाल का उपरी भाग तथा छाती को भी साथ साथ जमीन से स्पर्श करावें। पेट का भाग ऊपर ले जावे। और ध्वनियुक्त 'रेचक' (श्वास बाहर निकालना) करे।

(६) छठी अवस्था को 'केशोरूर्स्कोट' कहते हैं। इसमे पाँचवीं अवस्था में बताए— पैर, घुटने और हाथ

के पंजे स्थिर रखकर भुजाएँ सीधी करे। ध्वनियुक्त 'पूरक' कर के छाती सामने ले जावे, पीठ को झुकावे। सिर पीछे झुकाकर, दृष्टि ऊपर रखकर 'कुम्भक' करे।

(७) सातवीं अवस्था को 'केशेरूविकास' कहते हैं। इसमें 'कुम्भक' कायम रखते हुए पैरों को सीधा करे। भुजाएँ सीधी रखे और सिर दोनों हाथों के मध्य भाग में रखे। ठुड्डी को छाती से लगावे। पैरों तथा हाथों के तलवे जमीन से लगे हुए हो और सीधे हों, इस का पूरा ख्याल रखे। 'कुम्भक' कायम रखे।

(८) आठवीं अवस्था को 'ऊर्ध्वोक्षण' कहते हैं। यह अवस्था तीसरी अवस्था के समान है। भुजाएँ सीधी रखे। एक पाँव आगे लावे और दोनों हाथों के तलवों के मध्य भाग में रखे। इस पैर का घुटना भुजा के भीतर से सामने लावें। पैर का तलवा जमीन से लगा हुआ रहे। दूसरे पैर का घुटना जमीन से स्पर्श करे और पाँव की एड़ी उठी हुई रहे। इस प्रकार तीसरी अवस्था में बताए अनुसार गर्दन और सिर पीछे रहना चाहिए और दृष्टि ऊपर रखें। कमर और पीठ झुके हुए हों। 'कुम्भक' कायम रखें।

(९) नवमीं अवस्था, बिलकुल दूसरी अवस्था है। पेट अन्दर लेजाकर नाक और कपाल दोनों घुटने के बीच में लगावे। और ध्वनियुक्त 'रेचक' करे।

(१०) दसवीं अवस्था, प्रथम अवस्था है। ध्वनियुक्त 'पूरक' कर के खड़े हो जावे। इतना ध्यान रखे कि खड़े होते समय घुटने एक दूसरे से सटे हुए रहने चाहिए।

लाभ :- 'सूर्यनमस्कार' से स्नायुएं तथा अन्तरिन्द्रियाँ बलवान बनती है। (१) प्रथम अवस्था से पैरों का टेढ़ापन दूर होता है। भुजाओं के पीछे के त्रिशिर (Triceps) मज़बूत बनते हैं। जठराग्नि तेज होती है। गर्दन पुट्ठे सशक्त होते हैं।

(२) दूसरी अवस्था से हाथ की अंगुलियाँ, पिण्डलियाँ तथा टांगों के पीछे के भाग की स्नायु एवं पेट, नितंब, पीठ, अन्तड़िओं की स्नायु का अच्छा व्यायाम होता है। ये सशक्त बनती है। नाभि के पास तन्तुजाल (Solar plexus) उत्तेजित होकर शक्तिशाली बनता है।

(३) तीसरी अवस्था से गले, गर्दन, पीठ, कमर का अच्छा व्यायाम होता है। क्रमशः पैर आगे पीछे ले जाने से 'यकृत' पर दबाव पड़ता है। यह स्वास्थ्य के लिए बहुत ही हितकर है।

(४) चौथी अवस्था से भुजाओं, हथेलियों, पैर की अंगुलियों पर सारे शरीर का वज़न पड़ता है। इस से हाथ और पैर सम्बन्धी कोई शिकायत नहीं रहती और ये शक्तिशाली बनते हैं।

(५) पाँचवीं अवस्था से कण्ठमणि के पास कण्ठग्रंथी (Thyroidgland) बलवान और निरोगी बनती है। घुटने, हाथ, भुजाएँ और कलाइयाँ मज़बूत बनती हैं। उदर और नितंब की स्नायुएं बलवान बनती हैं। गर्दन मजबूत बनती है।

(६) छट्ठी अवस्था से गर्दन, गला, कण्ठग्रन्थी (Thyroidgland), पीठ, पेट, भुजाएँ सुन्दर बलवान

बनते हैं। पाचनशक्ति बढ़ती है। गले और पेट की तमाम बीमारियाँ दूर हो जाती हैं। आँखों की ज्योति बढ़ती है। त्रिशिख स्नायु (Triceps) मज़बूत बनती हैं। फेफड़े विस्तृत होकर छाती चौड़ी बनती है। बढ़ा हुआ पेट कम हो जाता है। यकृत और तिल्ली के रोग समाप्त हो जाते हैं। 'मण्डमाला' जैसे रोग दूर हो जाते हैं। रीढ़ की हड्डी मुड़ने से ज्ञानतंतुजाल उत्तेजित होती है, जिससे मस्तिष्क तेज़ होता है और स्मरणशक्ति बढ़ती है।

(७) सातवीं अवस्था से पैर, पिंडरी, नितंब, पेट, पीठ, गर्दन, गला, भुजाएँ तथा सिर के तमाम रोग दूर होकर, शक्तिशाली बनते हैं।

(८-९-१०) अवस्थाओं के लाभ क्रमशः ३, २, १ अवस्था के समान हैं। नित्य विधिपूर्वक 'सूर्यनमस्कार' करने वाला व्यक्ति कभी बीमार नहीं पड़ता। वेद के कहे 'जीवेम् शरदः शतम्' अनुसार मनुष्य सौ वर्ष तक निरोगी, सुखपूर्वक जीवन जी सकता है।

गर्भावस्था में स्त्रियाँ सूर्यनमस्कार न करें।

## * ताड़ासन *

इस आसन की स्थिति ताड़-खजूर-नारियल के पेड़ जैसी होने के कारण इसे ताड़ासन कहते हैं।

विधि :- स्वच्छ स्थान पर बिलकुल सीधे खड़े हो जावें। दोनों पैर मिले हुए हों। प्रथम दाहिनी भुजा उठाकर कन्धों की सीध में फैलावें। उसके पश्चात् ऊपर आकाश की ओर उठावें। इस प्रकार दूसरी भुजा भी उठावें। दोनों भुजाएँ ऊपर की ओर खींच कर रखें।

'पूरक' अर्थात् नाक से श्वास लेकर उदर में वायु भरकर 'कुम्भक' अर्थात् वायु को भीतर रोक कर, एड़ियों को उठाकर, पंजों के बल पर खड़े रहें। शरीर को ऊपर इस प्रकार खिंचें जैसे आप छत को छूना चाहते हों। ऐसी स्थिति में अच्छा अभ्यास हो जाने पर, पांव के पंजे पर चलने का अभ्यास करें। पाँव और हाथ नीचे रखकर 'रेचक' (श्वास निकालना) करें।

लाभ :- इस आसन से भुजा, टाँगों, छाती, कमर के खिंचाव से इनका विकास होता है। स्फूर्ति

ताड़ासन

और उत्साह आता है। आलस्य दूर हो जाता है। शरीर की लम्बाई बढ़ती है। छोटे कद वालों को यह आसन अवश्य करना चाहिए। पेट का भारीपन दूर होकर पतला होने लगता है। बड़ी आयु में जो कम्पन होती है वह नहीं होती। भुजाओं, टाँगों और जांघों की पेशियाँ शक्तिशाली बनती है। हृदय बलवान् बनता है, जिससे हृदयरोग नहीं होता। फेफड़ों में शक्ति बढ़ती है।

प्रातःकाल 'ताड़ासन' कर के चलने वाले को पेट साफ आता है। कब्ज़ियात दूर हो जाती है। चूर्ण लेने की आवश्यकता नहीं पड़ती। पेट साफ रहता है। स्त्रियाँ भी इस आसन को कर सकती है। स्त्रियों के लिए यह आसन लाभदायक है।

## * एकपादोत्थित ऊर्ध्वबद्धपद्मासन *

एक पैर पर खड़े होकर, दूसरे पैर को पद्मासन की स्थिति में रखने के कारणः इस आसन को 'एकपादोत्थित ऊर्ध्वबद्धपद्मासन' कहते हैं।

विधि :- सीधा खड़ा होकर; 'रेचक' कर के श्वास बाहर निकालें। उसके पश्चात् एक पैर को घुटने से मोड़कर जंघामूल में रखें। और 'कुम्भक' कायम रखते हुए, दोनों हाथों के अंगुठे के पास वाली अंगुली को अंगूठे के मूल में लगाकर दोनों हाथों को चित्र में बताए अनुसार सामने सीधा रखे, दृष्टि बिलकूल सीधी रखें। क्रमशः पैर बदलते समय 'पूरक' तथा 'रेचक' गहराई से किया करें।

लाभ :- यह आसन मानसिक शान्ति देने वाला

है। इस आसन की अवस्था में की गई प्रभु प्रार्थना से बहुत लाभ होता है। प्रभु भक्ति में मन लगता है। प्राचीन काल में ऋषि इस आसन को लगाकर नदी-तट पर अथवा किसी एकान्त स्थान में घण्टों तपस्या करते थे। इस आसन से आलस्य दूर होता है। टाँगें मजबूत होती हैं। इस आसन में अच्छी सिद्धि प्राप्त हो जाने पर इष्ट की प्राप्ति होती है और मनोकामनाएँ पूर्ण होती हैं।

स्त्रियाँ भी इस आसन को कर सकती हैं।

एकपादोत्थित ऊर्ध्वबद्धपद्मासन

## * महावीरासन *

इस आसन से महावीर हनुमान की सी शरीर की अवस्था बनती है। इस लिए इस आसन को 'महावीरासन' कहते हैं।

विधि :- सीधे खड़े होकर 'पूरक' कर के श्वास लें, उसके पश्चात् 'कुम्भक' कायम रखते हुए; किसी एक पैर को लगभग २ फुट आगे बढ़ावें। और दोनों हाथों
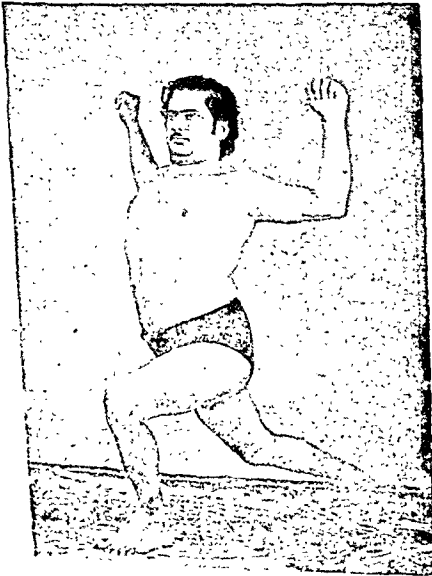
महावीरासन

की मुठियाँ बन्द कर के ऊपर उठावें—जैसा कि चित्र में बताया गया है। क्रमशः पैरों को बदलते रहें। थक जाने पर रुक कर 'रेचक' और उस के पश्चात् 'पूरक' क्रमशः किया करें। धीरे धीरे पैर आगे पीछे ले जाने की गति को तेज करना चाहिए।

लाभ :- इस आसन से छाती ( Thorax ) का विकास होता है। हाथ-पांव मज़बूत बनते हैं। पेट हलका बनता है। कद बढ़ता है। कमर पतली बनती है। शरीर शक्तिशाली और तेजस्वी बनता है। स्वास्थ्य चाहने वालों को यह आसन नित्य करना चाहिए।

स्त्रियाँ इस आसन को कर सकती हैं।

## * उत्कटासन

कुर्सी पर बैठने से शरीर की जो स्थिति बनती है, ठीक उसी आकार का यह आसन है।

विधि :- भूमि पर सीधे खड़े हो जावें। पैरों में एक फुट का अन्तर रखें। दोनों हाथ कमर पर रखकर 'पूरक' (श्वास लेना) कर के धीरे धीरे झुककर कुर्सी पर बैठने जैसी स्थिति बनावें। सारा वज़न टाँग के घुटनों के नीचे पाँव तक आना चाहिए। सुविधा अनुसार इस स्थिति में रहकर ऊपर उठें और 'रेचक' कर के श्वास को निकालें। तब तक कुर्सी की अवस्था में 'कुम्भक' कायम रखें।

इस प्रकार अच्छी तरह का अभ्यास हो जाने पर, कुर्सी की स्थिति से भी नीचे शरीर को ले आवें। पैरों के पन्जों पर सारे शरीर का वज़न आवे। नितम्ब (चुतड़) पैर की एड़ी पर रखें। यह आकार ठीक उसी

प्रकार का बनता है: जैसे कोई व्यक्ति शौच ( टट्टी ) के लिए बैठा हो। अन्तर सिर्फ इतना है कि इस में सारा वज़न पैर के पन्जों पर ही रहता है और पैरों की एड़ियाँ उठी हुई होती हैं।

लाभ :- इस आसन से टाँगे मज़बूत बनती हैं। रीढ़ और घुटने लचकीले बनते हैं। पाँव में आने वाली सूजन नहीं होती। वायुनाशक है। इससे घुटनों में होनेवाला दर्द दुर हो जाता है: जिससे चलने-फिरने में

उत्कटासन

कोई कठिनाई नहीं होती। पेट को साफ करता है।
स्त्रियाँ यह आसन कर सकती हैं।

* त्रिकोणासन :-

इस आसन को करते समय त्रिभुज या त्रिकोण के समान हो जाता है: इस लिए इसे 'त्रिकोणासन' कहते हैं।

विधि :- सावधान की सीधी स्थिति में खड़े हो जावें। दोनों पाँव दो फुट की दूरी तक फैला दें। एक पाँव को बगल की ओर मोड़िए। पाँव को इतना मोड़िया कि वह समकोण की स्थिति में हो जाए। उसके पश्चात् 'रेचक' (श्वास निकाला) कर के, जो पाँव मोड़ा हो,
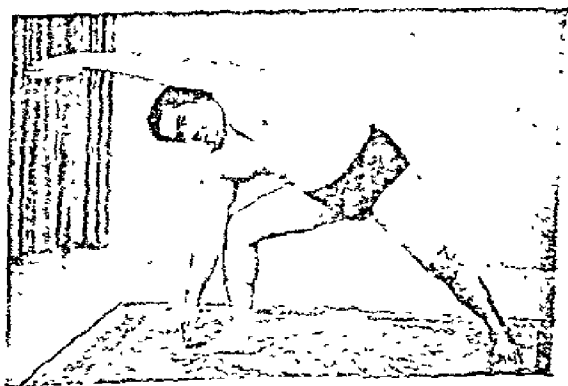
त्रिकोणासन-१

उसी ओर के हाथ से उस पाँव के अंगूठे को स्पर्श करें। दूसरा हाथ सिर की तरफ ऐसे खींच कर लम्बावे; जिससे वह उस ओर के कान का स्पर्श कर सकें। जैसा कि चित्र में बताया गया है। इसी प्रकार दूसरे पैर को मोड़कर दूसरी ओर करें। इस आसन को सावधानी पूर्वक करें। इस आसन को करते समय शरीर में शिथिलता नहीं आनी चाहिए। धीरे धीरे इसे करें। एक तरफ कर लेने पर जब सीधे खड़े हो जावें; तब 'पूरक' (श्वास लेना) करें। तब तक 'कुम्भक' (श्वास रोकना) कायम रखे।

लाभ :- इस आसन से नाड़ीतंत्र ( Nervous
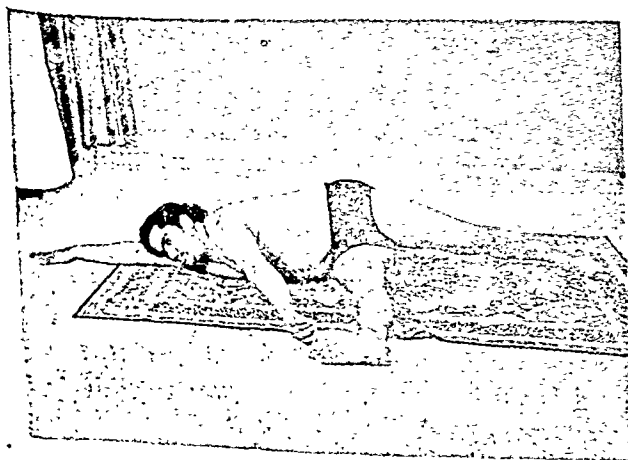
सुप्तत्रिकोणासन-२

System) में चेतना पैदा होती है। हाथ-पाँवों में शक्ति पैदा होती है। पेट की गैस निकल जाती है। पेट का मोटापा दूर हो जाता है। पाचनशक्ति तेज हो जाती है। दिल मज़बूत बनता है। शरीर सुन्दर बनता है।

जिनका दिल कमजोर हो और खड़े होकर यह आसन न कर सकते हों, वह जमीन पर लेट कर सरलता से कर सकते हैं। देखो चित्र संख्या दो।

मेरुदण्ड (पीठ की हड्डी) में लचक बढ़ती है; जिससे शरीर मे स्फूर्ति बढ़ती है। कमर के दर्द दूर हो जाते हैं। गृध्रसीवायु मे इस आसन से बहुत अच्छा लाभ होता है। भूख बढ़ती है। टट्टी साफ आती है।

गर्भावस्था मे स्त्रियों को यह आसन नहीं करना चाहिए।

## ⁂ पद्मासन ⁂

इस आसन के करने से पाँवों का आकार 'कमल' जैसा होने के कारण इसको 'पद्मासन' कहा जाता है। इस आसन को 'कमलासन' भी कहते हैं।

विधि :— सर्व प्रथम जमीन पर बैठकर, टाँगे सीधी कर के दोनों पाँव मिलाकर रखे। उसके पश्चात् दाहिना पैर बाईं जंघा पर और बायाँ पैर दाईं जंघा पर इस प्रकार रखे, जिससे दोनों पैरों की एड़ियाँ नाभि की दोनों ओर पेट से सटी हुई हों। हाथों को घुटनों पर रखे। कमर, छाती, सिर आदि सारा भाग सीधा और तना हुआ रखें। दोनों पाँवों के घुटने जमीन से मिले हुए रहने चाहिए। दृष्टि साधारण बन्द रखनी चाहिए।

इस आसन को करते समय ' प्राणायाम ' की विधि का पूरा ख्याल रखे। पासमें किसी योग्य गुरुसे विधि सीख लें।

'पद्मासन' शुरू में एक मिनिट से क्रमशः वढ़ाकर घण्टों तक ले जा सकते हैं।

लाभ :- चंचल मन को स्थिर रखने के लिये यह आसन बहुत ही अच्छा है। मानसिक कार्य करने वाले, चिंतन करने वाले तथा विद्यार्थियों के लिए यह आसन रामबाण का कार्य करता है। वीर्य रक्षा के
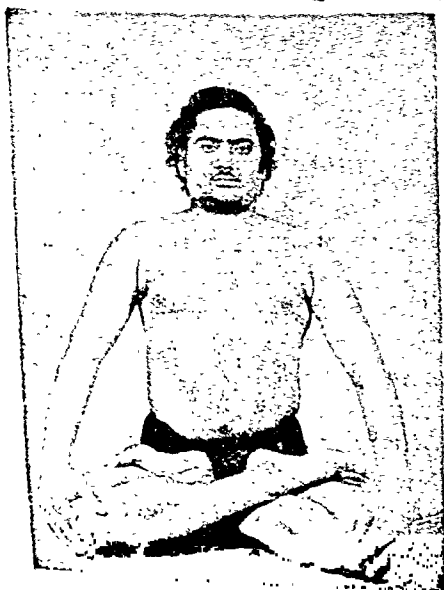
पद्मासन

लिये यह आसन अजोड़ है। पाचन शक्ति बढ़ाता है। भूख लगाता है। वात-पित्त-कफ आदि दोषों का नाश करता है। सुख-शान्ति और शक्तिको बढ़ाता है। आयु बढ़ाता है। स्वप्नदोष, प्रमेह के रोगों का नाश होता है। स्मरण शक्ति बढ़ाता है। पेट के रोग दूर हो जाते हैं। स्त्रियों के गर्भाशय सम्बन्धी रोगों को दूर करता है।

'यम'-नियम पूर्वक पद्मासन में अधिक समय बैठने से प्राण-अपान की एकता होकर 'कुण्डलिनी' जाग्रत होती है।

घेरंड, शांडिल्य तथा अन्य कई ऋषियों ने इस आसन की बहुत ही महिमा बताई है। ध्यान लगाने के लिये यह आसन अति लाभदायक है।

इस आसन को स्त्री-पुरुष दोनों कर सकते हैं।

### * सिद्धासन *

*यह आसन अलौकिक सिद्धियों को देने वाला* होने के कारण, इसको सिद्धासन कहते हैं।

'यमों' में जैसे 'ब्रह्मचर्य' श्रेष्ठ है। 'नियमों' में जैसे 'शौच' उत्तम है, ठीक इसी प्रकार आसनों में सिद्धासन श्रेष्ठ है।

विधि :- जमीन पर सीधे बैठकर, बायें पैर की एड़ी को अण्डकोष और गुदा के मध्य भाग में दबाकर लगावें। और दायें पैर की एड़ी को इन्द्री तथा नाभि के मध्य स्थान पर; बायें पैर की एड़ी की सीध में दबाकर रखे। कमर, पीठ-छाती, गर्दन, सिर-मतलब सारा शरीर सीधा रखना चाहिए। हाथों को घुटनों पर अथवा पैरों के पंजों पर रखा जा सकता है। दृष्टि न खुली हो न

बिलकुल बन्द। साधारण आँखें बन्द कर के अपने अन्दर में झांकने का अभ्यास करें। सरलता से जितना समय बैठ सकें, उतना ही बैठें। क्रमशः समय को बढ़ाते रहें। पर्याप्त समय बैठने का अभ्यास हो जाने पर योग्य गुरु से प्राणायाम की विधि सीख कर, उसका अभ्यास करें।

सिद्धासन को करते समय गुदा, इन्द्री एवं पेट को अन्दर ऊपर सरलता से खींचने का अभ्यास करें।

सिद्धासन

यह आसन संध्या के दोनों कालों मे किसी एकान्त-शान्त पवित्र स्थान पर अथवा नदी के किनारे करना चाहिए।

लाभ :- इस आसन का विधिपूर्वक अभ्यास करने से मन की एकाग्रता होती है। विचार पवित्र बनते है। भोग विलास की तरफ जाने से मनुष्य बचता है। ७२ हजार नाड़ियों का मैल, इस आसन के अभ्यास से दूर होता है। वीर्य की रक्षा होती है। वीर्य वाहनी नाड़ियों को यह आसन मजबूत बनाता है। जिससे वीर्य स्थिर रहता है। 'स्वप्नदोष' के रोगियों को यह आसन अवश्य करना चाहिए। बहुत लाभ होगा।

योगीजन इस आसन द्वारा वीर्य की रक्षा कर के प्राणायाम द्वारा उसे मस्तक की ओर ले जाते हैं। जिससे वीर्य 'ओज' तथा 'मेधा' शक्ति मे परिणित होकर 'दिव्यता' और मानसिक शक्ति अनुभव करते है।

'कुण्डलनी' जाग्रत करने के लक्ष सिद्ध के लिए यह आसन प्रथम सीढ़ी है।

सिद्धासन में बैठकर जो पढ़ा जाता है, वह अच्छी तरह याद रह जाता है। विद्यार्थियों के लिये यह आसन विशेष लाभदायक है। इस आसन से पाचनशक्ति तेज होती है। दिमाग स्थिर बनता है, जिससे स्मरणशक्ति बढ़ती है।

## * स्वस्तिकासन *

'स्वस्तिक' का अर्थ है कल्याणकारी। यह आसन कल्याण को देनेवाला होने के कारण इसको स्वस्तिक आसन कहते हैं।

विधि :- शास्त्रकारों ने 'स्वस्तिकासन' के लक्षणों का निम्न प्रकार उल्लेख किया है।

जानुवोरन्तरे सम्यक कृत्वा पादतले उभे,
समकायः सुखासीनः स्वस्तिकं तत् प्रचक्षते ।

( योग-सार )

अर्थात्—जानु और जंघा के मध्य भाग में दोनों पादतलों को भली प्रकार लगाकर, ग्रोवा, छाती और मेरू-दण्डको सीधा रखकर वैठने से 'स्वस्तिकासन' वनता है।
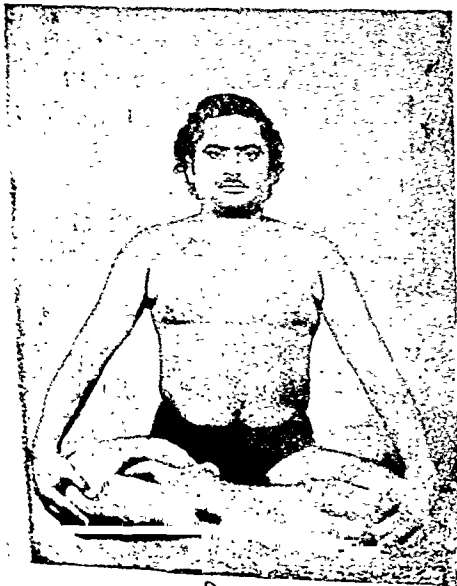
स्वस्तिकासन

जमीन पर बैठकर, पाँव लगाकर प्रथम दायाँ पाँव को मोड़कर उस पाँव का पंजा बाएँ टाँग की घुटनों के संधि में लगावें। उसके पश्चात् बाँए पैर के पन्जे को दाये टाँग के संधि में नीचे से ले जावें। दोनों पैर दोनों पीडियों में लगे रहें। दोनों हाथों को सीधा टट्टार रखकर दोनों घुटनों पर 'ज्ञानमुद्रा' मे रखें। दृष्टि नासाग्र भाग पर रखें।

लाभ :- इस आसन में सरलता से काफी समय बैठा जा सकता है। ध्यान अवस्था अथवा प्राणायाम करते समय जो पद्मासन न कर सके हों वे इस आसन में सरलता से कर सकते हैं। मन शान्त और स्थिर बनता है। चंचलता दूर हो जाती है। प्रभु भक्ति में मन लगता है।

## * सर्वाङ्गासन *

जमीन पर लेट कर सम्पूर्ण शरीर को ऊपर उठाने के कारण इस आसन को 'सर्वाङ्गासन' कहते हैं।

विधि :- सर्वप्रथम जमीन चित्त लेट कर, दोनों पैर तथा सारा शरीर बिलकुल सीधा रखें। श्वांस निकाल कर धीरे धीरे पैरों को सीधा रखते हुए ऊपर उठावें। प्रथम कमर तक पैर उठावें। उसके पश्चात् पीठ का जो भाग जमीन पर हो उसे उठाकर दोनों हाथों से कमर को पकड़ कर कन्धों से पैरों तक सारे शरीर को सीधा रखें। पूर्ण अभ्यास हो जाने पर हाथों के सहारे को छोड़कर, हाथों को जमीन पर सीधा रखें। इससे लाभ अधिक होगा। पैरों को सीधा आकाश की ओर रखें। दृष्टि दोनों पाँवों के मध्य

भाग में रखें। शरीर का सारा आधार सिर और कन्धे पर ही रहना चाहिए।

ठीक तरह से अभ्यास हो जाने पर, ऊपर ऊठाई टाँगों को आगे तथा पीछे की तरफ सीधा जमीन पर लगाने से 'हेलोर्ध्वसर्वाङ्गासन' और एक टाँग के घुटने को मोड़ कर उससे कान को छूने से 'कर्णपीड़लोर्ध्व सर्वाङ्गासन' होता है। दोनों टाँगों को मोड़कर 'पद्म-आसन' की स्थिति में लाने से 'उर्ध्व सर्वाङ्गासन' हो जाता है। इस प्रकार अन्य कई प्रकार हैं।

लाभ :- हठयोग शास्त्रकारने लिखा है :—

यत्किञ्चित्स्रवते चन्द्रादमृत दिव्यरूपिणः।
तत्सर्वंग्रसते सूर्यस्तेन पिंडो जरायुतः॥
तत्रास्ति करणं दिव्यं सूर्यस्य मुखवंचनम्।
नित्यमभ्यासयुक्तस्य जठराग्निविवर्धिनी॥
आहारो बहुलस्तस्य संपाद्यः साधकस्य च।
क्षणाच्च किंचिदधिकमभ्यसेच्च दिने दिने॥
वलितं पलितं चैव षण्मासोर्ध्वे न दृश्यते।
याममात्रं तु यो नित्यमभ्यसेत्स तु कालजित्॥

तालु (मुख में अन्दर जो ऊपर का भाग है) के मूल में आया हुआ 'चन्द्र' में से झरता 'चन्द्रामृत' उसे नाभि में रहा हुआ 'सूर्य' प्रतिक्षण ग्रस करता है; जिससे मनुष्य धीरे धीरे वृद्ध होता जाता है, उस 'चन्द्रामृत' के रक्षार्थ (चन्द्रामृत का पोषण शरीर को ही मिले उस हेतु) जिससे 'सूर्य' के मुख की वंचना हो, ऐसा मुद्रा रूपी आसन होता है।

नित्य अभ्यास करने से जठराग्नि बढानेवाला है। साधक के रुचि-अनुसार खुराक बढ़ाना चाहिए। शनैः शनैः इस आसन का समय बढ़ाते रहने से वलिं (ढीली चमड़ी का हो जाना) पलितं (बाल सफेद होकर झरने लगना) दूर हो जाता है, प्रतिदिन प्रहर मात्र अभ्यास करने से साधक मृत्यु को जीतता है।

रसायन रूपी इस आसन के अभ्यास से अमृत पान से जैसे शरीर सामर्थ्य वृद्धि, तीनों दोषों का शमन तथा वीर्य की गति ऊर्ध्व होकर अन्तःकरण की शुद्धि होते हुए मेधाशक्ति बढ़कर चिर यौवन की प्राप्ति होकर आयुष्य बढ़ता है।

थाईराइड नामक अन्तर्ग्रंथि की क्षमता इस आसन से बढती है। लिवर ( Liver ) और पिलिहा के दोष दूर होते है। स्मरण शक्ति बढती है। मुख पर से खील और अन्य दाग दूर होकर चेहरा (मुख) तेजस्वी बनता है। होजरी और नीचे उतरा हुआ आंतरड़ा अपने मूलस्थान पर स्थिर बनता है। पुरुषातन ग्रंथि पर यह आसन सुन्दर असर करता है। स्वप्नदोष का रोग दूर हो जाता है। मानसिक श्रम करने वाले, वकील, डाक्टर, साहित्यकार, विद्यार्थियों को यह आसन अवश्य करना चाहिए।

मंदाग्नि, अजीर्ण, कब्जियत, अर्श, थाईराइड का कम विकास, थोड़े दिनों का एपेन्डी-साइटीस और साधारण गांठ, अंग विकार, अकाल, वृद्धावस्था, दमा, कफ, चमड़ा के रोग, खून के दोष, स्त्रियों के दर्द जैसा कि मासिक धर्म की अनियमितता, मासिक के समय

दर्द का होना, नष्टार्तव (मासिक न आना) अर्यार्तव (अधिक मासिक आना) आदि रोगों को यह आसन लाभ पहुँचाता है।

थाईराइड के अति विकास वाले, खूब कमज़ोर हृदय वाले और अतिमेद वाले व्यक्तियों को किसी अनुभवी से सलाह लेकर ही यह आसन करना चाहिए।

इस आसन से नेत्र और मस्तिष्क की शक्तियाँ बढ़ती हैं। सिर के तथा नेत्रों के रोग दूर हो जाते हैं।

## * हस्तपाद विस्तृतहलासन *

लेटकर, सम्पूर्ण शरीर को पीछे की ओर लेजाकर हाथ, पाँव फैलाकर, पकड़े रहने के कारण इस आसन को 'हस्तपाद विस्तृतहलासन' कहते हैं। इस आसन का आकार ठीक 'हल' जैसा होता है।

विधि :- सर्व प्रथम भूमि पर लेट जावें। उसके पश्चात् 'रेचक' कर के 'उतानपादासन' की स्थिति में आवें अर्थात् दोनों टाँगों को धीरे धीरे सीधी रखते हुए भूमि से दो फुट ऊपर ले जावे। उसके बाद 'सर्वाङ्गासन' की स्थिति में आवें अर्थात् टाँगों को सीधी लेवल में आकाश की तरफ ले जावें। अब आकाश की ओर ली हुई टाँगों को धीरे धीरे पीछे की ओर, सिर की तरफ ले जावें। उसके पश्चात् हाथों को भी पीछे ले जावें। अब हाथों से पैरों के अंगूठों को पकड़ रखें। कठिनाई महसूस होने पर धीरे धीरे मूल स्थिति में पहुँचे। और 'पूरक' कर के 'रेचक' करें। आसन की चालु स्थिति में 'कुम्भक' कायम रखें, इसका पूरा ध्यान रखें—अन्यथा पूरा लाभ नहीं होगा। इसमें हाथ

पेट पीछे और आगे भी रखे जाते हैं। सर्व साधारण लोग हाथ पीछे पीठ की तरफ ज़मीन पर सीधे रखते हैं। इस अवस्था में शरीर का आकार 'हल' जैसा होता है, परंतु अधिक लाभ कारक यही है जिसको हमने यहाँ दिया है। देखें चित्र में।

लाभ :- 'ऊत्तानपादासन' तथा 'सर्वाङ्गासन' सिद्ध हो जाने पर इस आसन को करने से इन दोनों आसनों में जो लाभ होता है; वह सब इसमें होते हैं। कब्जियात दूर हो जाती है। शरीर सुन्दर और निरोगी बनता है। खून की तमाम खराबियाँ दूर हो जाती हैं। बुढ़ापा जल्दी नहीं आता। पेट की तमाम बीमारियाँ दूर हो
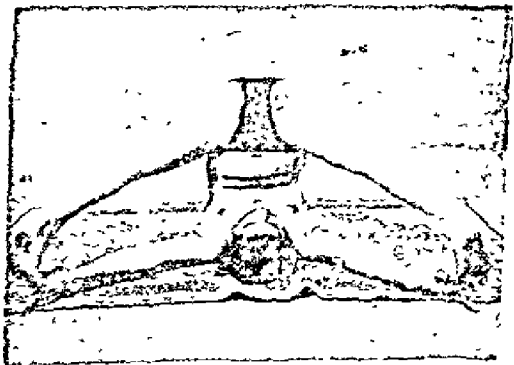
हस्तपाद विस्तृतहलासन

जाती हैं। पेट के गैस की बोमारी का नाश होता है। पेट पर रही अनावश्यक चरबो (fats) दूर हो जाती है। स्मरण शक्ति बढ़ती है। वीर्यनाश सम्बन्धी सब विकार दूर हो जाते हैं। मेधा शक्ति बढ़ती है। शरीर में स्फूर्ती रहती है। काम करने में मन लगता है। यह आसन सब लोगों को अवश्य करना चाहिए।

स्त्रियों के अनेक रोग इस आसन से मिटते हैं। स्त्रियाँ गर्भावस्था में यह आसन न करें।

## * चक्रासन *

इस आसन के करते समय शरीर चक्राकार बन जाता है, इस लिए इस आसन को 'चक्रासन' कहा जाता है।

विधि :- सर्व प्रथम सीधे खड़े हो जावें। पैरों में थोड़ा अन्तर रखे। हाथों को ऊपर लें। 'पूरक' (श्वास लेना) कर के हाथों को पीछे की ओर ले जावें। सिर और पीठ को पीछे झुकावें। फिर धीरे धीरे सावधानीपूर्वक हाथों को भूमि पर रखें। हाथों के पंजे पैरों की ओर रखें। कोशिश कर के पैर तथा हाथों को समीप लाने की कोशिश करें। यह विधि कुछ कठिन है। दूसरी सरल विधि निम्न प्रकार है। पहले पीठ के बल सो जावें। उसके पश्चात् दोनों हाथों और पाँवों को ज़मीन पर जमाकर शरीर के मध्य भाग को ऊपर उठावें और शरीर चक्राकार बनावें। सिर को दोनों हाथों के मध्यभाग में रखते हुए दृष्टि सामने रखें। जैसा कि चित्र में बताया गया है।

लाभ :– इस आसन से 'धनुरासन', 'शलभासन' तथा 'भुजंगासन' के तमाम लाभ मिलते है। सिर, गले, पीठ, उदर, कटि, भुजाएँ, हाथ, टाँगें, घुटने, पैर आदि सारे शरीर के अन्ग मज़बूत बनते है। सान्धों में दर्द नहीं होता, पाचनशक्ति बढ़ती है। पेट पर से अनावश्यक चरबी दूर हो जाती है। शरीर तेजस्वी, स्फूर्तीवाला बनता है। विकारी विचारों का नाश हो जाता है। स्वप्नदोष बीमारी दूर हो जाती है।

इस आसन के नियमित करने से बुढ़ापे में भी कमर नहीं झुकती। शरीर सीधा रहता है।

स्त्रियोंको गर्भावस्थामें यह आसन नहीं करना चाहिए।
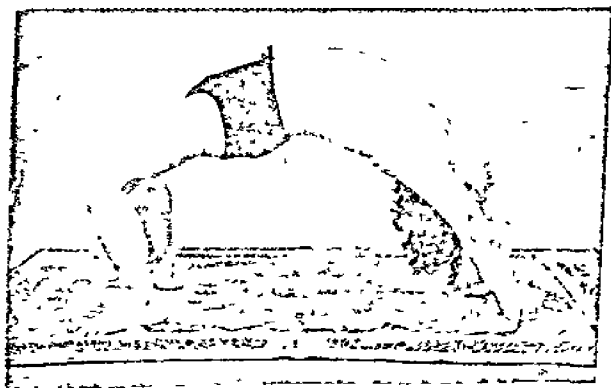
चक्रासन

## * भुजंगासन *

भुजंगासन का दूसरा नाम सर्पासन है। इस आसन की आकृति फन फैलाकर उठाए साँप जैसी होने के कारण इसको सर्पासन कहते हैं।

विधि :- सर्व प्रथम दोनों पाँव मिलाकर टाँगे सीधी कर के, पेट के बल पर सो जाए। पांव के दोनों अंगुठों को खेंच कर रखें। हाथ माथे की ओर लम्बावे। पाँव के अंगुठे, नाभि, छाती, कपाल और हाथों के तलवे जमीन पर एक लेवल में रखें। हाथों को धीरे धीरे कमर की ओर ऐसे ले जावें: जैसा चित्र में बताया गया है। उसके पश्चात् माथा और छाती पीछे की ओर बिल्कुल धीमी गति से ले जावें। नाभि का स्थान जमीन पर रहे। शरीर का सारा वजन हाथों के पंजों पर ही रहे। सिर को जितना हो सके पीछे ले जाने की कोशिश करें। शरीर की स्थिति कमान जैसी बन जायेगी और त्रिकास्थि ( Sacrum ) रीढ़ की हड्डी के अन्तिम भाग पर सारा दबाव केन्द्रित होगा। उस समय दृष्टि को ऊपर छत की ओर स्थिर रखें।

प्रथम यह स्थिति २० सेकण्ड तक रखें। उसके पश्चात् धीरे धीरे सिर को जमीन की ओर ले जावें। पहले छाती जमीन पर रखें: उसके पश्चात् सिर को जमीन से लगावे। आसन सिद्ध हो जाने पर, आसन करते समय श्वांस भर कर कुम्भक करें। और आसन को छोड़ते समय जब मूल स्थिति में आवे, उसके बाद श्वासों को बहुत ही धीरे धीरे छोड़ें।

लाभ :– घेरंड संहिता में भुजंगासन के लाभों का उल्लेख निम्न प्रकार आया है :–

देहाग्निवर्द्धनं नित्यं सर्व रोगविनाशनम् ।
जागर्ति भुजंगीदेवी साधनात् भुजंगासनम् ॥

*अर्थात् :– 'भुजंगासन से जठराग्नि प्रदीप्त होती है। सब रोगों का नाश होता है और कुण्डलिनी का प्रबोध होता है।'*

इस आसन के करने से ट्रेपझस ( Trapezius ), लेटीसीमस डोर्सी (Latissimus dorsi), इरेक्टर स्पाईन ( Erector Spinae ) और ग्लुटीयलस मसल्स ( Gluteal-muscles ) का tone और रीढ़ की हड्डी के गर्दन वाले

भुजङ्गासन
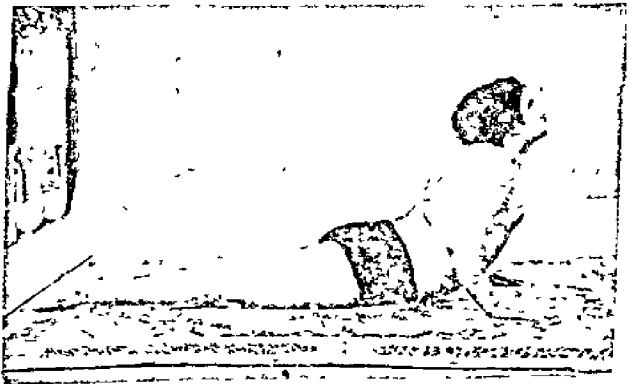
भाग में आए हुए, सर्वीकल ( Cervical ) ऊरोगुहा में आए हुए थोरेसिक ( Thoracic ), ऊदरगुहा में आए लम्बर (Lumber) और त्रिकास्थि ( Sacrum ) अन्तिम भाग कान की तरह मुड़ता जाता है। जिससे वहाँ के एक एक मणके को और स्नायुओं ( Ligaments ) को बड़े पैमाने पर खून पहुँचता है। परिणाम स्वरूप नाड़ी तंत्र न सिर्फ चेतन बनता है; परंतु चिरंजीवी, शक्तिशाली और सुदृढ़ बनता है। खास कर के मगज में से निकलने वाली ज्ञान-तंतुएँ बलवान बनती हैं। पीठ की हड्डी में रहने वाली तमाम खराबियाँ दूर हो याती हैं। पेट की स्नायुएँ रेकटी मसल्स (Rectimuscles) खिचने से वहाँ के अवयवों को शक्ति मिलती है। ऊदरगुहा में दबाव (Intrabdominal Pressure) बढ़ने से कब्जियात दूर हो जाती है। छाती और पीठ की तमाम खराबियाँ दूर होकर उनका विकास होता है। संरू गुहा के विकास से फेंफसे को पर्याप्त लाभ होता है। गर्भाशय और बीनाशय को ठीक करता है। जिसके कारण 'मासिक' विना कष्ट के आता है। 'मासिक धर्म' सम्बन्धी सब शिकायतें दूर हो जाती हैं। गर्भवती स्त्रियाँ यह आसन न करें। अति श्रम करने पर जो थकावट होती है, वह दूर हो जाती है। भोजन करने के पश्चात् जो वायु का दर्द (Ftatulence) आदि दूर होता है। सारे शरीर मे स्फूर्ती आती है। कफ-पित्त वालों के लिए यह आसन लाभदायक है। इस आसन के करने से हृदय मज़बूत बनता है।

ø

## * पवनमुक्तासन *

शरीर में रही वायु (पवन) को इस आसन के करने से मुक्ति मिलती है, इस लिए इस आसन को 'पवन-मुक्तासन' कहा जाता है।

विधिः— सर्व प्रथम भूमि पर सीधे चित्त लेट जावें। उसके पश्चात् प्राणायाम की 'पूरक' क्रिया कर के श्वांस भीतर लें। अब किसी एक पैर को घुटने से मोड़कर, दोनों हाथों को मिलाकर कैंची बनाकर मुड़े हुए पैर को घुटने के पास पकड़कर पेट से लगावें। फिर सिर को भूमि पर से उठाकर नासिका को मुड़े हुए पैर के घुटने से स्पर्श करावें। दूसरा पैर सीधा रखें। यह
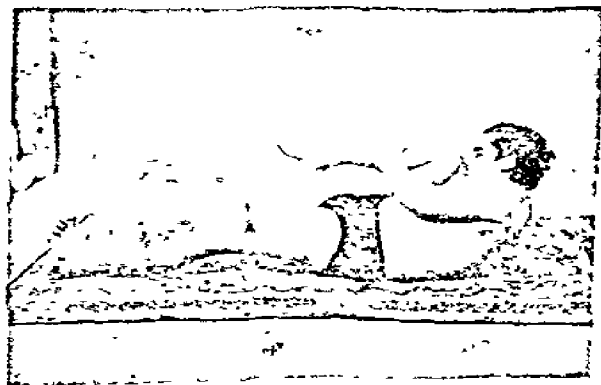
पवनमुक्तासन

क्रिया करते समय श्वांस न लेकर 'कुम्भक' कायम रखे। सिर तथा पैर को भूमि पर रखकर ही 'रेचक' करें। क्रमशः दोनों पैरों को बदलते रहें। दोनों पैरों को साथ में मोड़कर भी यह आसन किया जा सकता है।

लाभ :- इस आसन को नियमित करने से पेट की चर्बी (fats) कम हो जाती है। पेट की वायु नष्ट होकर पेट विकार रहित बन जाता है। कब्जियात दूर हो जाती है। पेट में अफर आने पर इस आसन को करने से उससे मुक्ति मिलती है। प्रातः जिनको शौच आने में कोई कठिनाई हो; उसे थोड़ा पानी पी कर इस आसनको १५-२० बार करने से शौच खुलकर आएगा। स्मरण शक्ति बढ़ती है। दिमागी काम करने वाले वकील, डाक्टर, साहित्यकार, व्यापारी, कर्ल्क तथा विद्यार्थियों को यह आसन नियमित अवश्य करना चाहिए।

स्त्रियाँ यह आसन कर सकती हैं; परंतु गर्भावस्था में इस आसन को न करें।

## ※ मत्स्यासन ※

"मत्स्य" का अर्थ है 'मछली', इस आसन को करके 'प्लाविनी' प्राणायाम करके काफी समय तक पानी में तैरा जा सकता है, इसलिए इस आसन को 'मत्स्यासन' कहते हैं।

विधि :- पद्मासन लगाकर सीधे बैठ जावें। उसके पश्चात् पीछे की ओर हाथों के बल, सावधानीपूर्वक लेट जावें। बायें हाथ से दाहिने हाथ की ओर दाहिने हाथ से बायें हाथ की भुजा के पुट्ठों को पकड़े। देखें प्रथम चित्र को।

रेचक करके कमर को ऊपर उठावें। घुटने, नितंब तथा सिर के शिखा-भाग (Vertex) के भूमि से लगा रखें। शिखा-भाग के नीचे कोई नरम कपड़ा अवश्य रखें। ठोड़ी गले के नीचे छाती के ऊपर वाले भाग पर लगावें। उसके पश्चात् दायें हाथ से बाये पैर के अंगूठे को तथा बाये हाथ से दाये पैर के अंगूठे को पकड़े। 'कुम्भक' की स्थिति में रहकर दृष्टि को भूमि की ओर सिर के पास ले जाने की कोशिश करे। फिर हाथ छोड़कर, कमर जमीन पर लगाकर, सिर को उठाकर सीधे बैठ जावें और 'पूरक' करके 'रेचक' करे। जमीन पर लेटकर भी 'पद्मासन' लगाकर यह आसन किया
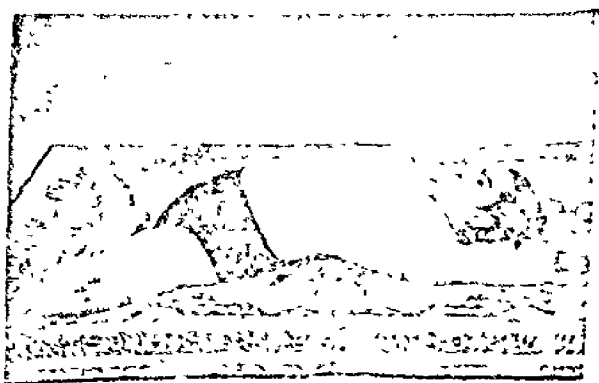
जा सकता है।

लाभ :- इस आसन से सम्पूर्ण शरीर मज़बूत बनता है। गले, छाती, पेट आदि की सब बीमारियाँ दूर हो जाती हैं। आँखों की ज्योति बढ़ती है। गला साफ रहता है। श्वांसक्रिया अच्छी बनती हैं। कंधे की नसें उल्टी मुड़ती है, जिसके कारण छाती ( Thorax ) और फेंफड़ों का विकास होता हैं। पेट साफ रहता है। आन्तों में रहा मैल, रेक्टम (Rectum) इस आसन से दूर होता है। खून का प्रवाह तेज़ होता है, इस कारण चमड़ी के रोग नहीं होते। दमा और खँसी दूर हो जाती हैं। छाती चौड़ी बनती है और पेट की चरबी कम हो जाती है।
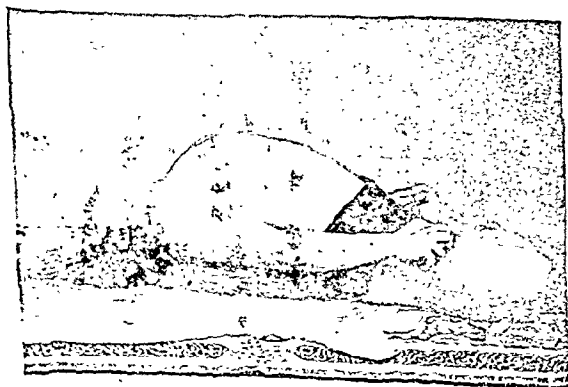
मत्स्य-आसन

स्त्रियों के मासिक धर्म सम्बन्धी तमाम रोगों को ठीक करके; नियमित बनाता है ।

## ※ योगमुद्रासन ※

योगाभ्यास में यह मुद्रा बहुत महत्व रखती है; इसलिए इस आसन का नाम ही रखा है 'योगमुद्रासन'।

विधि :- पद्मासन लगाकर; शरीर को सीधा रखते हुए, दोनों हाथों को पीठ के पीछे ले जावें । बाये हाथ से दाहिने हाथ की कलाई पकड़े । और दोनों हाथों को खिंचकर उस स्थान पर ले जावें, जहाँ रीढ़ और कमर का मिलान होता हो । उसके पश्चात् 'रेचक' (श्वास बाहर निकालना) करके, 'कुम्भक' (श्वास रोकना)

योगमुद्रासन

को कायम रखते हुए सिर को भूमि पर, (शरीर को सीधा रखते हुए) स्पर्श करावें। पुनः धीरे धीरे सिर को उठाकर सीधे हो जावें और 'पूरक' (श्वास लेना) करें। यह आसन कुछ कठिन है। इसलिए प्रथम 'सिद्धासन' अथवा सुखासन में भी किया जा सकता है; परंतु पूर्ण लाभ पद्मासन लगाकर ही करने से होगा।

लाभ :- इस आसन के अच्छी तरह सिद्ध हो जाने पर 'कुण्डलिनी' जागृत हो जाती है। पेट के गैस की बीमारी दूर हो जाती है। पेट तथा आंतरड़े सम्बन्धी सब शिकायतें दूर हो जाती हैं। तिल्ली, यकृत, फेफड़े ठीक अवस्था में रहते हैं। हृदय मज़बूत बनता है। खून की खराबियाँ दूर हो जाती हैं। कुष्ठ तथा यौन विकार दूर हो जाते हैं। पेट का मोटापा दूर हो जाता है। शरीर मज़बूत बनता है। मानसिक शक्ति (Will Power) बढ़ती है।

सगर्भा स्त्रियाँ इस आसन को न करें।

### * धनुरासन *

इस आसन को करने से मनुष्य के शरीर का आकार खिंचे हुए धनुष जैसा हो जाता है; इसलिए इस आसन को 'धनुरासन' कहते हैं।

विधि :- योगकारों ने धनुरासन की विधि का उल्लेख निम्न प्रकार किया है—

प्रसार्य पादौ भुवि दंडरूपौ, करौ च पृष्टे धृतपादयुग्मम्।
कृत्वा धनुस्तुल्य विवर्तिताङ्गं, निगद्य योगी धनुरासनं तत्॥

सर्व प्रथम जमीन पर पेट के बल लेट जाएँ। दोनों ?र मिले हुए हों। दोनों टाँगों को घुटनों से मोड़ें।

दोनों हाथों को पीछे की ओर बढ़ा कर गिट्टा (टखना) को पकड़े। अब 'रेचक' (श्वास निकाला) करके, धीरे धीरे, सिर को तथा हाथों मे पकड़ी हुई टाँगों को खिचें। सिर को पीछे ले जाने की कोशिश करे। दृष्टि भी पीछे की ओर होनी चाहिए। 'कुम्भक' (श्वास को रोकना) कायम रखते हुए; कठनाई महसूस होने पर हाथ छोड़कर, सिर तथा टाँगों को सीधा जमीन पर रखते हुए 'पूरक' (श्वास लेना) करें।

लाभ :- इस आसन से पेट की चर्बी कम हो जाती है। पेट से गैस का नाश हो जाता है। पेट के तमाम रोग दूर हो जाते हैं। कब्जियात दूर हो जाती

धनुरासन

है। भूख खूब लगती है। छाती का दुःखावा दूर हो जाता है। हृदय की धड़कन दूर हो जाती है। हृदय मज़बूत बनता है। गले की तमाम बीमारियाँ दूर हो जाती है। आवाज़ मधुर बनती है। श्वास की क्रिया सुन्दर बनती हैं। मुँह सुन्दर बनता है। आँखों की ज्योति बढ़ती है। आँखों के तमाम रोग दूर हो जाते है। हाथ-पाँव में होनेवाली कम्पन दूर हो जाती है। शरीर सुन्दर बनता है। रेक्टी मसल्स (Recti Mucles) में खिंचाव होने से पेट को बहुत लाभ होता है। आन्तरड़े पर खूब दबाव आने के कारण (Intra abdominal Pressure) काफी बढ़ता है, जिसके कारण आन्तरड़े में पाचनरस आने लगता है। इससे जठराग्नि तेज हो जाती है। इस आसन में 'भुजंगासन' तथा 'शलभासन' दोनों का समावेश होने के कारण इन दोनों आसनों के तमाम लाभ इससे मिलते है।

स्त्रियों के लिए यह आसन बहुत ही अच्छा है। इस आसन से मासिक धर्म विकार, गर्भाशय के तमाम रोग दूर हो जाते हैं। डिम्बग्रन्थियों सम्बन्धी सब शिकायतें दूर हो जाती हैं। गर्भावस्था में स्त्रियाँ इस आसन को न करें।

### * पूर्वोत्तानासन *

सो कर दोनों पैर तथा हाथों को पीछे की तरफ ले जाने के कारण इस आसन को 'पूर्वोत्तानासन" कहते हैं।

विधि :- भूमि पर चित्त लेटकर, दोनों पैर सीधे रखें। दोनों हाथ शरीर साथ सट्टा कर रखें। अब

दोनों हाथों को पीछे की ओर बढ़ा कर गिट्टा (टखना) को पकड़े। अब 'रेचक' (श्वास निकाला) करके, धीरे धीरे, सिर को तथा हाथों से पकड़ी हुई टांगों को खिचे। सिर को पीछे ले जाने की कोशिश करें। दृष्टि भी पीछे की ओर होनी चाहिए। 'कुम्भक' (श्वास को रोकना) कायम रखते हुए, कठनाई महसूस होने पर हाथ छोड़कर, सिर तथा टांगों को सीधा जमीन पर रखते हुए 'पूरक' (श्वास लेना) करें।

लाभ :- इस आसन से पेट की चरबी कम हो जाती है। पेट से गैस का नाश हो जाता है। पेट के तमाम रोग दूर हो जाते हैं। कब्जियात दूर हो जाती

धनुरासन

है। भूख खूब लगती है। छाती का दुःखावा दूर हो जाता है। हृदय की धड़कन दूर हो जाती है। हृदय मज़बूत बनता है। गले की तमाम बीमारियाँ दूर हो जाती है। आवाज़ मधुर बनती है। श्वास की क्रिया सुन्दर बनती हैं। मुँह सुन्दर बनता है। आँखों की ज्योति बढ़ती है। आँखों के तमाम रोग दूर हो जाते है। हाथ-पाँव में होनेवाली कम्पन दूर हो जाती है। शरीर सुन्दर बनता है। रेक्टी मसल्स (Recti Mucles) में खिचाव होने से पेट को बहुत लाभ होता है। आन्तरड़े पर खूब दबाव आने के कारण (Intra abdominal Pressure) काफी बढ़ता है, जिसके कारण आन्तरड़े में पाचनरस आने लगता है। इससे जठराग्नि तेज हो जाती है। इस आसन में 'भुजंगासन' तथा 'शलभासन' दोनों का समावेश होने के कारण इन दोनों आसनों के तमाम लाभ इससे मिलते है।

स्त्रियों के लिए यह आसन बहुत ही अच्छा है। इस आसन से मासिक धर्म विकार, गर्भाशय के तमाम रोग दूर हो जाते हैं। डिम्बग्रन्थियों सम्बन्धी सब शिकायतें दूर हो जाती हैं। गर्भावस्था में स्त्रियाँ इस आसन को न करें।

### * पूर्वोत्तानासन *

सो कर दोनों पैर तथा हाथों को पीछे की तरफ ले जाने के कारण इस आसन को 'पूर्वोत्तानासन" कहते हैं।

विधि :- भूमि पर चित्त लेटकर, दोनों पैर सीधे रखें। दोनों हाथ शरीर साथ सट्टा कर रखें। अब

'रेचक' करके श्वास निकाल दे और टांगों को धीरे धीरे ऊपर उठाकर आकाश की तरफ ले जावें, उसके पश्चात् टांगें सीधी रखते हुए पीछे, सिर की तरफ जमीन से लगावें। अब दोनों हाथ भी पीछे लेजाकर दोनों पैरों के दोनों अंगूठों को पकड़ें और ठोड़ी को छाती से लगाकर 'कुम्भक' कायम रखें। टांगें नीचे उतारें, पर 'पूरक' तथा 'रेचक' क्रमशः गहरा करें।

लाभ :- इस आसन से अजीर्ण, कब्जियात, अर्श, थाइरोइड का कम विकास, अन्नविकार, अकाल वृद्धावस्था, दम, कफ, खून की खराबी आदि विकार दूर हो जाते हैं। यकृत (Liver) इस आसन से अच्छा बनता है।
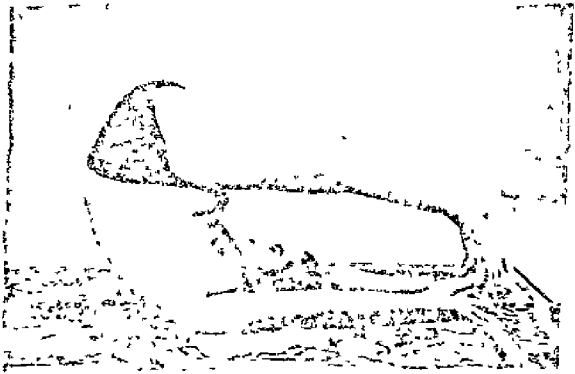
पूर्वोत्तानासन

छातो (Thorax) का विकास होता है। श्वांसक्रिया तेज़ होनेसे ओक्सीजन (Oxygination) होकर खून शुद्ध बनता है। गले की बोमारियाँ दूर हो जातो है। पेट के तमाम दर्द (Flatulence) मिटाता है। संधिवा (Rheumatism) मिटाता है। पेट की चर्बी ( Fats ) घटाता है। सिर (Head) के दर्द मिटाता है। वीर्यविकार दूर होते है। बुरे विचारों का नाश होता है। नाड़ोतंत्र (Nervous System) स्वच्छ बनता है। शरीर तेजस्वी और शक्तिशाली बनता है। सब लोगों को यह आसन अवश्य करना चाहिए।

स्त्रियाँ साधारण स्थिति में यह आसन कर सकती हैं। गर्भावस्था में यह आसन नहीं करना चाहिए।

## ※ हृदयस्तंभासन ※
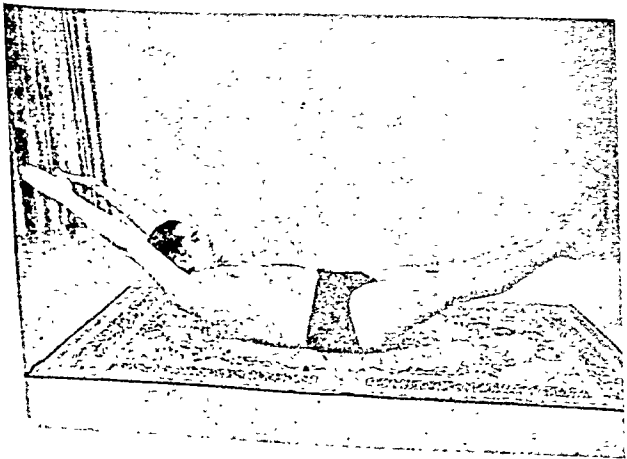
हृदयस्तंभासन

इस आसन का सम्बन्ध हृदय से होने के कारण, 'हृदयस्तंभासन' कहते है ।

विधि :– मुलायम चादर पर चित्त लेटकर । दोनों हाथों को सिर की तरफ लम्बा करे । हाथों और पैरों को फूट की दुरी पर रखकर 'रेचक' कर के, वायु को पेट से निकाल कर, कुम्भक कर के दोनों हाथों और दोनों पैरों को एक फुट ऊपर उठावे । दृष्टि हृदय स्थल पर रखें। फिर धीरे धीरे हाथ-पैर नीचे रखकर 'पूरक' कर के श्वास लें।

लाभ :– हृदय मजबूत बनता है । छाती, गर्दन, पीठ, पेट के रोग दुर हो जाते है । नियमित करनेवाले को कभी अचानक हृदय बन्द (Hart feal) नहीं होता।
इस आसन को स्त्रियाँ गर्भावस्था के सिवाय बाकी के समय में कर सकती है ।

## :: नाभिसन ::

इस आसन में सारे शरीर का वजन नाभि पर पड़ता है, जिसके कारण इस का नाम 'नाभिसन' रखा गया है ।

विधि :– जमीन पर कोई नरम वस्तु बिछाकर, उस पर पेट के बल सो जावें । कपाल, नासिका, छाती, नाभि, घुटने, पैर, सीधे जमीन पर रखें । फिर दोनों हाथों को आगे की तरफ ले जावे । शरीर को तानकर लम्बाने की कोशिश कर के; 'पूरक कर के वायु को नाक द्वारा अन्दर ले । अब दोनों पाँवों तथा हाथों को दो फूट दुर रखकर ऊपर लगभग एक फुट उठावें ।

पश्चात् हाथों और पैरों को धीरे धीरे नीचे रखते हुए 'रेचक' कर के श्वास निकाले ।

लाभ :- पाचनशक्ति बढ़ती है । वायु-गैस की तकलीफ नाश हो जाती है । नाभि शक्तिशाली बनकर मस्तिष्क के रोगों में राहत मिलती है । वीर्यनाश के रोग दुर हो जाते हैं । पेट बढ़ना बन्द हो जाता है । छाती मज़बूत बनती है । शरीर की लम्बाई बढ़ती है । स्त्रियाँ इस आसन को न करे ।
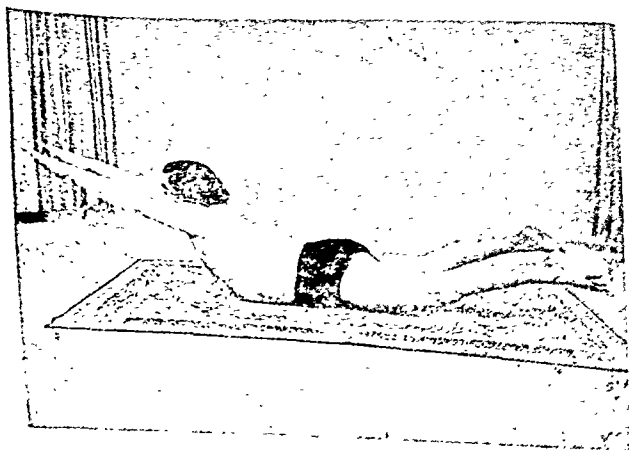
नाभिसन

## * स्थितऊर्ध्वपादविस्तृतासन *

पैरों को ऊपर उठाकर हाथों से पकड़ते हुए, शरीर को स्थिर रखने के कारण इस आसन को 'स्थितऊर्ध्व-पादविस्तृतासन' कहते हैं ।

विधि :- भूमि पर बैठकर टाँगों को सीधा रखें । अब दोनों टाँगों को जितना फैला सकें, फैलावें । अब 'पूरक' कर के श्वास लें और हाथों से दोनों पैरों के अन्गूठों को पकड़कर, टाँगों को १½ फुट भूमि से ऊपर उठाकर स्थित रखें और 'कुम्भक' कायम रखें । टाँगें और हाथ बिलकुल सीधे रहने चाहिए । थक जाने पर टाँगे भूमि पर रखकर 'रेचक' और उसके पश्चात् 'पूरक' क्रमशः करें ।
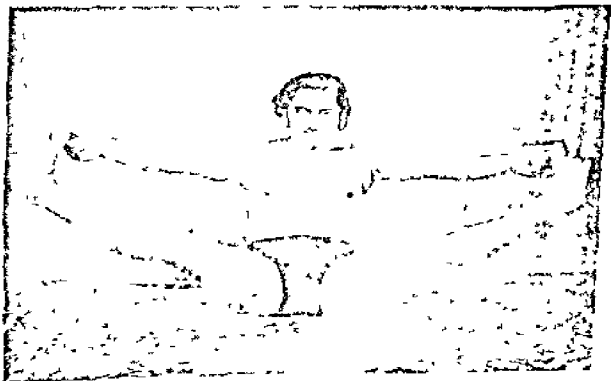
स्थितऊर्ध्वपादविस्तृतासन

लाभ :- इस आसन से टाँगों में तथा बाहों में शक्ति का संचार होता है। शरीर बलवान और स्फुर्ती वाला बनता है। हाज़मा अच्छा बनता है। पीठ, नाभि, पेट स्वस्थ रहते हैं।

स्त्रियाँ इस आसन को कर सकती हैं।

### ※ हंसासन ※

इस आसन का आकार 'हंस' जैसा होने के

हंसासन

कारण इस आसन को 'हंसासन' कहते हैं।

विधि :- दोनों हाथों को जमीन पर रखकर, 'रेचक' कर के श्वांस को निकाल कर—शरीर को हलका बनाकर, दोनों घुटनों को दोनों कोहनियों के ऊपर रखें। कोहनियाँ शरीर की तरफ रहें, इसका ख्याल रखे। शरीर का सारा वजन हाथों पर ही रहेगा और शरीर का आकार हंस जैसा बनावे। उसके बाद यह आसन अच्छी तरह सिद्ध हो जाने पर, धीरे धीरे सिर को नीचे लेजाकर नाक को भूमि से स्पर्श कराने का अभ्यास करावे। आसन छोड़ के 'पूरक' तथा 'रेचक' क्रमशः करे।

लाभ :- इस आसन से भुजाओं की माँसपेशियाँ मज़बूत बनती हैं। चहरा तेजस्वी बनता है। शरीर में स्फूर्ती पैदा होती है। भोजन शीघ्र हजम होता है। नाड़ीतंत्र (Nervous System) अच्छा बनता है।

योग मे विशेष रुचि रखनी वाली स्त्रियाँ, साधारण अवस्था में यह आसन कर सकती हैं।

## * जानुशिरासन *

जाँघ को सीधा रखकर सिर का उसके साथ स्पर्श कराने के कारण इस आसन को 'जानुशिरासन' कहते हैं।

विधि :- भूमि पर बैठकर, टाँगों को सीधा मिलाकर रखें। उसके पश्चात् किसी एक पैर को हाथ से लेकर, उसकी एड़ी को गुदा और अण्डकोश के मध्य भाग 'सीवनी' में लगावें और तलवा साथवाली टाँग जो सीधी रखी हुई है उसकी जाँघ से लगाकर रखे। अब प्राणायाम की 'पूरक' क्रिया कर के श्वांस बाहर

निकाले और पेट के नाभि प्रदेश को अन्दर लेकर दोनों हाथों को सीधा रखें। टाँग के पैरों को कैंची बनाकर पकड़े, और सिर को झुकाकर उस टाँग को स्पर्श करें। इस अवस्था में प्राणायाम की कुम्भक स्थिति कायम रखें अर्थात् श्वास न लें और न निकालें। थक जाने पर धीरे धीरे सिर को ऊपर उठाकर सीधे बैठ जाने पर 'पूरक' और 'रेचक' करें। क्रमशः पैर बदलें। इस आसन को करते समय गुदा और मूत्रेन्द्रिय को ऊपर खींचने से असाधारण लाभ होता है।

इस प्रकार दोनों टाँगें सीधी कर के, सिर को स्पर्श कराने से 'पश्चिमोत्तानासन' हो जाता है।
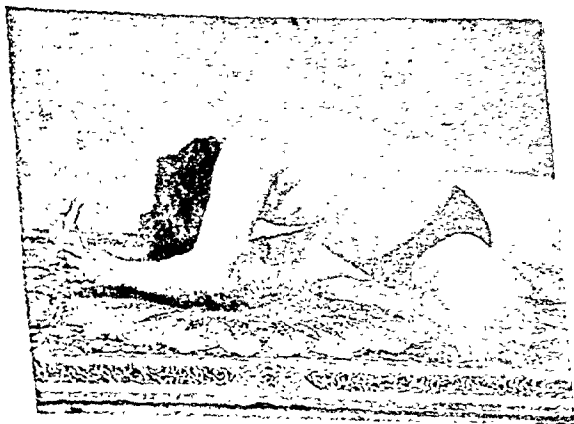
जानुशिरासन

*लाभ :- इस आसन से तिल्ली, जगर की खराबियाँ* दूर होती हैं। खाँसी, दमा, साधारण ज्वर तपैदिक के रोग दूर होते हैं। आयु बढ़ती है। पेट की सब खराबियाँ दूर होती हैं। पाचनशक्ति तेज होती है। गठिया कि बिमारी नहीं होती। हेमस्ट्रींग मसल्स ( Hamstring Muscles ) मजबूत बनते हैं। खून का सर्क्युलेशन तीव्र बनने से, खून खराबी के तथा चमड़ी के रोग नहीं होते। नाड़ीतंत्र ( Nervous System ) सुन्दर बनता है। पेट की चरबी कम हो जाती है। वात और कफ का नाश होता है। सायटिक (Sciatica) की बिमारी में फायदा होता है। वीर्य रक्षा होती है।

स्त्रियाँ इस आसन को न करें।

## * संकोचासन *

इस आसन से सारे शरीर का संकोच होता है; इसलिए इस आसन को 'संकोचासन' कहा जाता है।

विधि :- भूमि पर चित्त सो कर, दोनों टाँगों को सीधा रखते हुए आकाश की ओर उठावें। उसके पश्चात् दोनों हाथों से कमर को पकड़े और टाँगें मोड़कर 'पद्मासन' लगावें। 'पद्मासन' लगजाने के बाद 'रेचक' कर के किसी एक टाँग के घुटने को नाक से स्पर्श करावें। उसके बाद दूसरी टाँग के घुटने को नाक से लगावें। कठिनाई महसूस होने पर पद्मासन छोड़कर, टाँगों को धीरे धीरे भूमि पर रखकर "पूरक" तथा 'रेचक' क्रमश. गहराई से करें।

लाभ :- इस आसन से सारे शरीर का व्यायाम होता है। शरीर निरोगी बनता है। श्वासक्रिया सुन्दर

वनकर आयुकी वृद्धि होती है। बुढ़ापा जल्दी नहीं आता। गठियाँ-वायु आदि के रोग नहीं होते, वात, पित्त और कफ का शमन होता है। गलेकी बीमारियाँ नहीं होती। पेटकी चर्वी (Fats) कम हो जाती है। छाती(Thorox)का विकास होता है। बाल जल्दी सफेद नहीं होते,दाँत मज़बूत बनते है। पेट, छाती,और कमरके रोग कभी नहीं होते। वीर्य परिपक्व बनकर ऊर्द्धगति की ओर जाता है; जिससे स्वप्नदोष तथा प्रमेह जैसे रोग नहीं होते और शरीर बलिष्ठ बनता हैं।

स्त्रियों को यह आसन नहीं करना चाहिए।

संकोचासन

जन साधारण के लाभार्थ, कुछ आसनों तथा उनसे रोगमुक्ति का साररूप में यहाँ उल्लेख किया है, अब हम प्राणायाम पर विचार करेंगे।

## प्राणायाम । ४ ।

"तस्मिन् सति श्वास प्रश्वासयोर्गति विच्छेदः प्राणायामः।"

जो वायु बाहर से भीतर जाता है उसको श्वास और जो भीतर से बाहर जाता है उसको प्रश्वास कहते हैं। प्रश्वास को बलपूर्वक नासिका द्वारा बाहर फेंककर बाहर ही यथा शक्ति रोकना। इस बाह्य क्रिया को तीन बार करने के पश्चात् श्वास को धीरे धीरे बाहर से भीतर ही रोकना। जब घबड़ाहट होने लगे तब धीरे २ बाहर निकाल देना। इस अभ्यान्तर क्रिया को सामर्थ्य और इच्छानुसार बारंबार करते रहना। इस प्रकार अभ्यास करते करते कुछ काल के पश्चात् वायु रुकी होने की दशा में आपसे आप जहाँ की तहाँ स्थिर होने लगती है और कुछ काल तक स्थिर रहती है तब वायु को बाहर न निकालना किन्तु आपसे आप उसका निवारण होने देना। उस समय वायु का बाहर से भीतर आना भी बन्द रहता है। यह स्तम्भवृत्ति धारणा का स्वरूप धारण करती है। जब तक धारणा में प्रवृत्ति नहीं होती तब तक यह स्तम्भवृत्ति प्रत्येक बार नहीं होती किन्तु कभी होती और कभी नहीं भी होती है।

जब तक स्तम्भवृत्ति न हो एवं जिस बार स्तम्भवृत्ति हो तब अभ्यान्तर में घबड़ाहट होने पर वायु को कुछ बाहर की ओर लावें; परन्तु बाहर की वायु भीतर की ओर लाकर उसे बीच ही में रोक दें। इसी प्रकार यथा

खेंच रोकता हुआ बाहर लावें ऐसे ही बाह्य क्रिया में भीतर लावें। यह बाह्याभ्यान्ताक्षेपी क्रिया है। यह चारों क्रियायें मिलकर एक ही प्राणायाम हुआ। यह चतुर्थ क्रिया बाह्य और अभ्यान्तर क्रिया का अभ्यास होने के पश्चात् कुछ काल में हो सकती है। जब चारों क्रियाओं का अभ्यास हो जाता है, तब योगी अपनी इच्छा और किञ्चित् प्रयत्न से ही बाहर की वायु को बाहर और भीतर की वायु को भीतर जहाँ की तहाँ एक साथ रोक सकता है। ज्यों ज्यों योगी का अभ्यास बढ़ता जाता है त्यों त्यों प्राणायाम की स्थिति देश, काल और संख्या के परिणाम से दीर्घ और सूक्ष्म हो जाती है।

"ततः क्षीयते प्रकाशा वरणम्। यो. द.।"

"किञ्च धारणा सुच योग्यता मनसः। यो. द.।"

प्राणायाम करने से प्राणापानादि वायु, रक्त, मांसादि धातु, मन, बुद्धयादि अन्तःकरण चतुष्टय और श्रोत्र, नेत्र, वाणी आदि की स्थूलता और विकार दूर हो जाता हैं एवं "ज्ञान" और "आनन्द"की प्राप्तिके बाधक आवर्णोंका नाश हो जाता है। प्राणायाम करने ही पर "प्रत्याहार" द्वारा मन की धारणाओं में योग्यता होती है अर्थात् परमात्मा का ध्यान, निश्चयात्मक ज्ञान विज्ञानादि को प्राप्त किया जा सकता है।

## प्रत्याहार। ५।

शीत, उष्ण, क्षुधा और तृषा के निवारणार्थ यथोचित्त प्रबन्ध कर के बाहर के पट बन्द कर भीतर के पट खोल देना। ईश्वर से ही मिलना, ईश्वर को ही देखना अर्थात् चिन्तन करना, ईश्वर से ही बात (स्तुति-प्रार्थना) करना और ईश्वर की हो बात सुनना।

जो योगी यम नियमादि का विधिवत् पालन कर लेता है उसे ऐसा करने में कठिनता नहीं होती और ईश्वर भी उसको बड़े प्रेम से अपनाते हैं इस लिये उस का "चित्त" स्थिर हो जाता है, क्यों कि यम नियमासन और प्राणायाम की सफलता से सर्वव्यापक, अन्तर्यामी, प्रीति साधक, परमात्मा के साथ थोड़ा ही अन्तर अर्थात् "ज्ञान" की दूरी रह जाती है। वह अन्तर प्रत्याहार से दूर हो जाता है। यदि संस्कार दोष के कारण कुछ उचाट हो तो जब तक उचाट रहे तब तक किसी नदी के किनारे २ विचरना अथवा ईश्वर में प्रेम बढ़ाने वाले छन्दों का "कीर्तन" व "श्रवण" करना।

श्वास प्रश्वास की गति का अवरोध होने के समय प्रणयनिधि परमात्मा को समीप उपस्थित और अन्तर्यामी जानकर उनसे बड़ी सभ्यता, सरलता, शान्ति और सावधानी के साथ आवश्यक स्पष्ट और प्रेमपूर्वक मनके द्वारा ही बातें करना। प्रभु अत्यन्त सरल स्वभाव, प्रेमी और निरभिमानी होने से उत्तर भी देंगे; परन्तु अनभ्यास होने से वह उत्तर सुनाई न देगा पर उसका प्रभाव आत्मा पर अवश्य पड़ेगा। और जब परमात्मा का चिन्तन करने एवं प्रज्ञा द्वारा साक्षात्कार करने का अभ्यास होकर चित्त एकाग्र होगा तब अवश्य सुनाई देगा। अर्थात् उस उत्तर का ज्ञान प्राप्त होगा। उसकी विधि यह है कि प्रणव सहित सप्त व्याहृतियों का अर्थ मननपूर्वक स्तुति, प्रार्थना और उपासना करना। यथा :-

ओम् भूः-आप मेरे आत्मिक जीवनके प्राण और स्वामी हैं।
ओम् भुवः-आप मेरे अविद्यादि क्लेशों के दूर करनेवाले

ओम् स्वः-आप आनन्दप्रद आत्मा और मित्र हैं।
ओम् महः-आप मुझे उच्च बनानेवाले हृदय और गुरु हैं।
ओम् जनः-आप मेरे आधार! जन्म और मुक्ति दाता, नाभि और पिता हैं।

ओम तपः-आप अपने ज्ञान और बल से प्रेरक और सहायक भुजा और बंधु हैं।

ओम सत्यम्ः-आप मुझे असत् से निकालकर सत्यस्वरूप में लयकर लेनेवाले प्रज्ञा और सखा हैं।

जैसी जैसी प्राणायाम की दीर्घ और सूक्ष्म स्थिति होती जावे वैसे ही वैसे प्रणव सहित "सप्त व्याहृतियों" का अर्थ उच्च सूक्ष्म और विस्तृत करते हुये परमात्मा की स्तुति, प्रार्थना और उपासना करना। इन्ही के आधार और आश्रय से प्रत्येक विषयों का विचार और निश्चय करना। अन्त में केवल प्रणव (ओ३म्) का ही चिन्तन और ध्यान मात्र करना।

प्राणायाम और प्रत्याहार योगकी 'साधन दशा' और धारणा, ध्यान, समाधि 'सिद्धि दशा' हैं।
"स्व विषया सम्प्रयोगे चित्तस्य स्वरूपनुकार इवेन्द्रियणां प्रत्याहारः। यो. द.।"

"सतः परमावश्तेन्द्रियाणाम्। यो. द.।"

जब जीवात्मा परमात्मा के प्रेम में मग्न रहता है तब चित्त की प्रवृत्ति रज और तम की नहीं होती। मन वस में हो जाता है और इन्द्रियाँ स्थिर हो जाती हैं। ईश्वर का ऐसा स्वभाव लगता है तब सत्य भी में प्रवृत्ति और प्रीति रहती है असत्य में नहीं।

## धारणा । ६ ।

"देश बन्धश्चित्तस्य धारणा । यो. द. ।"

नाभि आदि स्थानों में वायु की और साथ ही परमात्मा का ध्यान कर के मन की स्थिरता होने से चित्तवृत्ति का निरोध होना 'धारणा' है। प्राणायाम करते करते वायु की नाभि आदि स्थानों में स्वतः स्थिरता होती है। फिर अभ्यास करते करते दृढ़ भूमि हो जाता है। तब योगी जिस स्थान मे वायु का निरोध करना चाहता है कर लेता है और वहां प्राणापानादि के विकार दूर होकर "दिव्य शक्ति" प्राप्त होती है। नाभिचक्र में संयम करने से जठराग्नि मे सूक्ष्मता और विशेष बल आ जाता है, जिसका प्रभाव सारे शरीर पर पड़ता है। तब उसे शरीर के सब अङ्ग, प्रत्यङ्गों का ज्ञान होता है। रस शीघ्रता से बनता है। मलमूत्र निर्गंध और थोड़ा होना है। शरीर में कोई विकार और रोग उत्पन्न नहीं होते। अङ्ग, प्रत्यङ्गों मे हलकापन, स्फूर्ति, तृप्ति, देह सुगंधित, मधुर वाणी और उज्वल कान्ति हो जाती है। कपाल में संयम करने से बुद्धि अति सूक्ष्म हो जाती है, जो बहुत कठिन और सूक्ष्म विषय का ग्रहण करती है। 'नासिका'के अग्र भाग में 'दिव्य गध' और 'जिह्वा'के अग्र भाग में दिव्य रस का अनुभव व ज्ञान होता है। कंठ कूप मे संयम करने से क्षुधा तृषा पर जय प्राप्त होती है। वायु द्वारा उत्तमोत्तम रस प्राप्त होने से क्षुधा तृषा की निवृत्ति और प्रसन्नता प्राप्त होती है। हृदय कमल में संयम करने से चित्त स्फटिक शिला की भाँति स्थिर और स्वच्छ हो जाता है। इसी प्रकार अन्य अङ्ग, प्रत्यङ्गों

और नस, नाड़ियों में संयम करने से शरीर मात्र पर जय प्राप्त होती है। शीतोष्ण की निवृत्ति, दिव्य दृष्टि, दिव्य श्रवण शक्ति, दिव्य चेष्टा और बल, दिव्य गति, दिव्य क्रिया और दिव्य प्रवृत्ति हो जाती है।

योगाभ्यासी को उचित है कि अपनी चित्तवृत्ति को वायुके गमनागमन, देशविशेष और सिद्धियों के रहस्य में न लगा देवे क्यों कि ऐसा करने से ध्यान से वञ्चित रह जाना पड़ता है।

ध्यान । ७ ।

"तत्र प्रत्यैक तानता ध्यानम् । यो. द. ।"

"धारणा"की दशामें ईश्वरोपासना करते करते जब धारणा की स्थिति हृदय कमल में होती है तब जीवात्मा परमात्मा में मग्न हो जाता है। केवल इतना स्मरण रहता है कि मैं ईश्वर को साक्षात्कार कर रहा हूँ। उस समय जीवात्मा समुद्र के समान गम्भीर और स्थिर हो जाता है। मन निर्विषय होता जाता है। निश्चयात्मक ज्ञान प्राप्त होता है। योगी की वृत्ति छोटे छोटे बालकों के समान भोली भाली होती जाती है, और संसार के व्यवहारों को भूलता जाता है। मानो संसार की ओर से सोता और ईश्वर की ओर जागता जाता है। प्रायः देखने, सुनने और बोलने की ओर प्रवृत्ति नहीं होती। "ध्यान" के अतिरिक्त अन्य कुछ प्रिय नहीं लगता।

समाधि । ८ ।

"तदेवार्थ मात्र निर्भासं स्वरूप शून्य मिव समाधिः"

। यो० द० ।

"ध्यान" संस्कार मात्र रह जाना स्वरूप शून्य के

समान हो जाना समाधि है। जैसे मूर्छित कराने वाली वस्तु सुंघाने से मूर्छित हो जाता है, वैसे ध्यान करते करते जीवात्मा अन्तर्ध्यान होकर परमात्मा के बीच मग्न हो जाता है। इसमें मूर्छित होना धारणा का और परमात्मा में मग्न हो जाना ध्यान का परिणाम है जैसे अग्नि में तपाते तपाते लोहा अग्निवत् हो जाता है, वैसे ध्यान करते करते योगी अपने आप को भूलकर ईश्वरवत् हो जाता है। जल में डुबकी लगाने वाले की भांति योगी परमात्मा के बीच मग्न होकर फिर बाहर को आजाता है।

समाधि की दशा मे योगी आनन्दमय और उसका शरीर अग्निमय हो जाता है। उस समय उसे यह ज्ञात नहीं होता कि मैं कौन हूं, कहाँ हूँ, क्या करता हूं, अर्थात् अपने को भूल जाता है। तब योगी को वृत्ति सांसारिक मनुष्यों से भिन्न हो जाती है और प्रज्ञा ऋतम्भरा हो जाती है जो सत्यही को ग्रहण करती है। जैसे सृष्टि में सूर्य, चन्द्र, इन्द्र (विद्युत) पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु आदि से क्रिया की सिद्धि होती है वैसे योगी एक अद्भुत सृष्टि को देखता हैं। वहाँ ब्रह्म ही वायु है अर्थात् योगी की क्रिया की सिद्धि और इच्छा की पूर्ति 'ब्रह्म' ही से होती है। 'ब्रह्म' ही सूर्य अर्थात् ज्ञान का प्रकाश करता है। ब्रह्म ही चन्द्रमा अर्थात् आनन्द प्रद होता है। ब्रह्म ही विद्युत अर्थात् बल है। ब्रह्म ही पृथिवी है जिस में योगी स्थित है। ब्रह्म ही जल है जो शान्त, निर्मल और पवित्र रखता तथा तृप्ति और तुष्टि कारक हैं। ब्रह्म ही अग्नि अर्थात्

प्राण है । ब्रह्म शक्ति से योगीका शरीर और मन वस में हो जाता है । हर्ष, शोक, शीत, उष्ण, क्षुधा और तृषा आदि पर विजय पा लेता है । हलका, गरू, अचल, वेगगामी और अन्तर्ध्यान हो जाता है जल में डुब नहीं सकता. कंटक नहीं लगता और कोई दुःख नहीं होता। हाथी के समान बल प्राप्त कर लेता है । दुसरे के चित्त का ज्ञान प्राप्त कर लेता है । बहुत दूर की बात सुन और वस्तु देख सकता हैं । सर्व ग्रहों, नक्षत्रों के समूह और तारागणों की गति, स्थिति तथा समस्त भुवन का ज्ञान प्राप्त कर सकता है । सिद्ध पुरुषों से मिल सकता है । पूर्व जन्म तथा भूत और भविष्य का ज्ञान होता है। अपनी इच्छानुसार मृत्यु को प्राप्त हो पुनर्जन्म को प्राप्त कर सकता हैं । समस्त भूतों और प्राणियों को अपने अनुकूल बना सकता है ।

" तद् वैराग्या दपि दोष बीज क्षये कैवल्यम् " यो-द-

सिद्धियों के वैराग्य से सब दोषों का बीज नाश हो जाता है, तब योगी कैवल्य को प्राप्त हो जाता हैं। हृदय की अविद्या अज्ञान की गाँठ खुल जाती है । सर्व संशय दूर हो जाता हैं । पाप कर्म भस्म हो जाता है । मलिन संस्कारों का क्षय हो जाता है और तब जीवात्मा परमात्मा में लय अर्थात् "मुक्त" हो जाता है ।

ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः ।

लेखक को आशीर्वाद देते

# महात्मा आनन्द स्वामीजी महाराज

मेरे प्यारे श्री भगवानदेवजी वर्षों से योग-साधना में लगे हुए हैं। जिज्ञासु बनकर अनेक योगियों के पास जाकर योग की क्रियाएँ सीखते रहे हैं।

अपने अनुभवोंके आधार पर आपने यह पुस्तक बहुत अच्छी लिखी है। "चिकित्सा शास्त्र" का भी आपको ज्ञान है: इसलिए "आसनों से रोगमुक्ति" का मार्ग इस पुस्तकमें सुन्दर ढंग से बताया गया है। स्वास्थ्य चाहनेवालों और योगाभ्यासियों को यह पुस्तक अवश्य पढ़नी चाहिए।

नई दिल्ली, २ जून १९६१ — आनन्द स्वामी सरस्वती

जीवन प्रिन्टींग प्रेस : फोन नं ४७२ : पोरबन्दर